शिक्षा की द्वैमासिक पत्रिका
अंक-14, नवंबर-दिसंबर 1996

संपादन एवं वितरण:
एकलव्य, कोठी बाज़ार
होशंगाबाद - 461 001
फोन: 07574-3518

वार्षिक सदस्यता (6 अंक) : 35 रुपए
(ड्राफ्ट एकलव्य के नाम से बनवाएं)

मुखपृष्ठ: हिमालय पर्वत शृंखला का शिवलिंग पर्वत। इसकी ऊंचाई 21,563 फीट है। यह पर्वत शृंखला परतदार तलछटी चट्टानों से बनी हुई है। अत्यधिक दाब की वजह से ये चट्टानें मुड़-तुड़ गई हैं। चूंकि तलछट महासागरों की तली में जमा होती है इसलिए सदियों से लोग यह सोचते आए हैं कि क्या वजह रही होगी जो ये चट्टानें पानी से निकलकर इतने ऊपर उठ गईं। कुछ भू-वैज्ञानिक मानते थे कि ये पर्वत शृंखलाएं महाद्वीपों की टकराहट का परिणाम हैं। लेकिन सवाल था कि इतने बड़े और भारी महाद्वीप खिसकेंगे कैसे? इसी सदी के छठे और सातवें दशक में जब समुद्र के तल के लगातार नए बनने की खोज हुई तो लोगों के समझ में आया कि कैसे खिसकते हैं महाद्वीप। इस थ्योरी के बाद ऐसी पर्वत शृंखलाएं बनने की गुत्थी भी सुलझी। *(इस विषय पर और अधिक जानकारी पृष्ठ 25 पर)*

पिछला आवरण: हिमालय पर्वत शृंखला की एक पहाड़ी में दिख रही परतदार तलछटी चट्टानें।

इस अंक में विभिन्न किताबों से लिए गए चित्र: *होल्म्स प्रिंसिपल ऑफ फिज़िकल जिओलॉजी* प्रकाशक: चैपमैन एंड हॉल (इंग्लिश लैंग्वेज बुक सोसाइटी के सहयोग से); *रेस्टलेस अर्थ*, लेखक: निगेल काल्डर, प्रकाशक: पेंग्विन बुक्स; *सचित्र कहानियां*, प्रकाशक प्रगति प्रकाशन, मॉस्को।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय की एक परियोजना के तहत प्रकाशित

बुन्सन बर्नर, हवा में ऑक्सीजन और किताबी प्रयोग 19

हवा में ऑक्सीजन की मात्रा पता करने के लिए किताबों में अक्सर मोमबत्तियों वाले प्रयोग का जिक्र किया जाता है। लेकिन इसके जो परिणाम आते हैं वो ऑक्सीजन की मात्रा बताने की बजाए किन्हीं और दिशाओं में इशारा करते हैं। इसके बाद क्या करें कि किताबों में प्रयोग सिर्फ देने के लिए दिए जाते हैं या फिर कि कभी लिखने वाला खुद भी करके देखता है? इस प्रयोग को लेकर संदर्भ के पिछले अंकों से चल रही खोजबीन का एक और हिस्सा।

समुद्र का फैलना और महाद्वीपों का खिसकना 25

सबूत तो बार-बार इशारा कर रहे थे कि महाद्वीप अपनी जगह से खिसके हैं। लेकिन कैसे मानें कि इतने भारी और विशाल महाद्वीप कभी खिसके भी होंगे? लेकिन जब महासागरों के तल की जांच-पड़ताल शुरु हुई तो साफ हो गया कि महाद्वीप कैसे खिसकते हैं। साथ ही यह भी मालूम पड़ा कि समुद्र का तल लगातार नया बनता रहता है। इन्हीं खोजों के साथ शुरुआत हुई एक नए विषय – 'प्लेट टेक्टोनिक्स' की। क्या हैं प्लेट? कैसे चलती है यह?
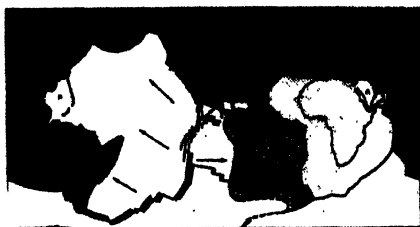
एक जीवनी की तलाश 42

उत्तर भारत के लोगों के चिंतन पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव कबीर का है। जहां पाखंड पर तीखा प्रहार करना हो या सभी धर्मों के संकीर्ण नजरिए को तोड़ने की बात आती है, कबीर स्वाभाविक रूप से याद आते हैं। लोगों के दिलोदिमाग पर इस तरह छा जाने वाले को अतीत में खोजना और उसकी जीवनी का गठन करना एक खासा मुश्किल काम है। इसी खोज में जब एक इतिहासकार निकला तो देखें उसे क्या-क्या मिला।

इस अंक में

आपने लिखा

'संदर्भ' के 12वें अंक से कुल मिलाकार निराशा हुई।

एक तरफ 'मैंने प्रयोग किया' नामक लेख है। इसमें दिए गए प्रयोग बच्चों के हिसाब से तो रोचक हैं परन्तु शिक्षकों के लिए इस तरह के छुट-पुट प्रयोग बिना किसी संदर्भ के क्या महत्व रखते हैं समझ नहीं आया। इसके अलावा मोमबत्ती की लौ वाला प्रयोग कागज़ की नली (स्ट्रॉ) से हो पाना असंभव है। छोटी-से-छोटी नली लेने पर भी जितनी देर में लौ के काले हिस्से में से वाष्पित मोम दूसरी तरफ से बाहर निकल सकती है उतनी देर में कागज़ जल जाता है। नली को लौ के काले हिस्से तक पहुंचने के लिए बाहरी, पीले व नीले हिस्सों में से गुज़रना होता है। इन हिस्सों का तापमान काफी ज़्यादा होता है, और उससे कैसा भी कागज़ जल जाएगा। क्या प्रयोग छापने से पहले कर के देखना ज़रूरी नहीं है? 'प्रिय बरखुरदार' भी शिक्षकों के लिहाज़ से साधारण लगा।

दूसरी ओर 'आयनिक बंध और परमाणु' और 'क्यों नहीं लगता करंट' जैसे भारी भरकम लेख हैं जिनमें ढेरों अत्यंत मुश्किल अवधारणाएं एक साथ शामिल कर ली गई हैं। ऐसे लेखों को समझ पाने के लिए काफी पूर्व जानकारी की ज़रूरत है – अत: ऐसे लेख किसी किताब के हिस्से तो हो सकते हैं जहां ये अवधारणाएं एक-एक करके विकसित की जाएं परन्तु संदर्भ जैसी पत्रिका के माध्यम से ऐसी कठिन अवधारणाओं की गुत्थी यूं 'शॉर्टकट' से सुलझा पाना असंभव-सा है।

हिन्दी पत्र पत्रिकाओं, खासकर विज्ञान की पत्रिकाओं में अक्सर ये सोच भी रहती है कि हल्की-फुलकी या नाटकीय भाषा के इस्तेमाल से कठिन अवधारणाओं को आसान बनाया जा सकता है। संदर्भ में भी कहीं-कहीं यह होता दिखता है। इस भ्रम से बचें। विषय वस्तु को आसान बनाने के लिए न केवल आसान भाषा का प्रयोग ज़रूरी है बल्कि उससे भी ज़्यादा ज़रूरी है धीमे-धीमे उदाहरणों, प्रयोगों व व्याख्या के माध्यम से, आसान तरीके से अवधारणाओं की समझ बनाना, जिससे आगे जानकारी आत्मसात करने के लिए भी आधार बन सके।

संदर्भ को मिलने वाले खतों के अलावा पाठकों, खासकर शिक्षकों से अलग से भी प्रतिक्रिया इकट्ठी की जानी चाहिए। क्या ऐसा हो रहा है? ऐसा इसलिए ज़रूरी है ताकि संदर्भ दिशाहीन न हो जाए।

शशि सक्सेना
दिल्ली

बारहवा अंक पढ़कर लगा पत्रिका में निखार आता जा रहा है। सुशील जोशी का लेख 'आयनिक बंध और परमाणु' फिर से जादू कर गया, उन्हें बधाई। सवालीराम के लम्बे-लम्बे उत्तर पढ़कर लगता है कि शायद सवालीराम अब फुरसत में अधिक रहते हैं। सवालीराम के 'गति सापेक्ष है' के पृष्ठ 28 के दूसरे कॉलम में:

1. रोज रात को एक ही समय पर तारों की स्थिति बदली हुई मिलती थी –

पढ़कर यह भ्रम होता है कि अब बदली हुई नहीं मिलती।

2. सूर्य का पथ भी साल भर आकाश में एक-सा नहीं रहता था – पढ़कर लगता है कि शायद अब पथ एक-सा रहता है।

'मिलती थी' के स्थान पर 'मिलती है' और 'रहता था' के स्थान पर 'रहता है', होता तो भ्रमात्मक स्थिति न बनती। अरविंद गुप्ते की जन्तुओं के प्रवास की यात्रा रोचक लगी। साधना सक्सेना का लेख 'गुम होती बोलियां' काफी भारी रहा। लेख को कई बार पढ़ने पर भी मैं राष्ट्रभाषा, भाषा और बोलियों में तालमेल नहीं बिठा पा रहा हूं। अजय शर्मा के लेख 'क्यों नहीं लगता करंट' ने हमें काफी ऊपर ले जाकर भी बचा लिया, शर्माजी को साधुवाद। दिशा नवानी ने 'बच्चे महज़ बच्चे नहीं' के माध्यम से हम शिक्षकों को सोचने के लिए मजबूर कर दिया है। 'प्रिय बरखुरदार' जैसी सामग्री पढ़कर लगता है कि पत्रिका को छापने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं मिल पा रही है। अमिताभ मुखर्जी का लेख 'मैंने प्रयोग किया' हमें कुछ न कुछ करते रहने की प्रेरणा देता है।

एस. एन. साहू
शास. आर. एन. ए. उ. मा. विद्यालय
पिपरिया, जिला होशंगाबाद

मैं 'शैक्षिक संदर्भ' की नियमित पाठक हूं। प्रत्येक अंक पढ़ने के बाद मैं विश्वास से कह सकती हूं कि आपने इस पत्रिका को प्रकाशित कर अंधेरे के क्षितिज पर प्रकाश पुंज बिखेरने का श्रेष्ठ कार्य किया है, शिक्षकों के थमे हुए ज्ञान को नई दिशा तथा विद्यार्थी के ज्ञान में उफान लाने का कार्य किया है। इसके सभी विज्ञान लेख ज्ञानवर्धक, रोचक, जिज्ञासा शांत करने वाले होते हैं। शायद यही वजह है कि मैं पत्र लिखने के लिए मजबूर हो गई।

अभी हाल ही में 13वां अंक पढ़ा। जिसमें 'पानी जब उबले', 'बंकर में जीवन', 'दिमाग भी बौराया', 'कौन भाषा कौन बोली', 'सहबंधन यानी इलेक्ट्रॉन...' तथा 'अनारको का दूसरा सपना' (कहानी) आदि बहुत पसन्द आए। अजय शर्मा का लेख 'पानी जब उबले' काफी सहज एवं सरल शब्दावली में, वर्तमान परिवेश से जोड़कर लिखा गया था। फिल्म बॉइलिंग के संबंध में जानकारी रोचक थी। 'बंकर में जीवन' लेख में दी गई जानकारी काफी रोचक, नवीन अनुभूति व अनुभव देने वाली थी। 'शुक्राणु और अंडाणु का निर्माण' लेख पर विस्तृत चर्चा की जानी चाहिए। ऐसा लगा कि जानकारी कुछ संक्षेप में दी गई है। 'दिमाग भी बौराया' जानकारी बहुत पंसद आई।

अगले अंक के इंतजार के साथ,

मीरा शर्मा
नगर पालिका माध्यमिक शाला
हरदा, जिला होशंगाबाद

प्यारी मासूम अनारको के बेहद प्यारे चित्र ने उसे बार-बार देखने को

मजबूर किया। सच, बचपन जैसी सुनहरी अनमोल खुशी मासूम बच्चों से छीनी जा रही है। एक समय था जब बचपन को मस्ती भरा और पूर्णत: चिंता मुक्त माना जाता था। पर अब तो बचपन भी बड़ों के समान चिंतायुक्त होता है, बचपन की शैतानी का गला भारी भरकम रसहीन किताबें, कोचिंग क्लास और माता-पिता की ज़रूरत से ज़्यादा ऊंची अपेक्षाओं द्वारा घोंट दिया जाता है। क्या बचपन को बचाने का कोई तरीका नहीं है?

बच्चों से दोस्ताना रिश्ते रखकर उनकी बुरी आदतों को भी दूर किया जा सकता है। उनमें सृजनात्मक गुणों का विकास किया जा सकता है। बच्चों से दोस्ती करने का एक बढ़िया तरीका मुझे मालूम है, इसका अनुभव भी है मुझे। बच्चों को बढ़िया कहानी सुनाई जाए जिसके पात्र स्वयं उनके नाम पर हों। कहानी में आगे क्या होगा इसकी जानकारी भी बच्चों से ली जाए यानी कि उन्हें महत्व दिया जाए। फिर देखिए बच्चों को कितना मज़ा आता है और हम उनके सबसे बढ़िया दोस्त बन बैठते हैं।

'बंकर में जीवन' – नवीनतम रोचक जानकारी के लिए धन्यवाद। पढ़ते समय स्वयं को बंकर में ही अनुभव किया।

'जब पानी उबले' दिलचस्प एवं विस्तृत जानकारी विद्यार्थियों ने भी बड़े शौक से पढ़ी। 'कौन भाषा, कौन बोली' ने वास्तव में कुछ सोचने को मजबूर किया।

कविता शर्मा, सरस्वती विद्या मंदिर
हरदा, जिला होशंगाबाद

बारहवा अंक मिला। इसे पढ़कर बहुत अच्छा लगा। 'दिमाग भी बौराया', 'तो धरती भी गोल निकली' आदि ऐसी बातें हैं जिनकी ओर आसानी से ध्यान नहीं जाता है। आपका यह प्रयास विज्ञान व समाज की सही अर्थों में सेवा है। मेरी शुभकामनाएं।

'ज़रा सिर तो खुजलाइए' प्रश्नों के माध्यम से जानकारी देने का अनूठा ढंग है। उत्तर देने वालों के नाम के साथ आप सही उत्तर का स्पष्टीकरण दें तो ज़्यादा लोग रुचि लेंगे।

कुल मिलाकर संदर्भ पढ़कर मन गदगद हो गया। आपका प्रयास शिखर तक पहुंचे, इसी आशा के साथ।

बेगराज जांगिड़, प्रेमनगर
श्रीगंगानगर, राजस्थान

तेरहवें अंक को पढ़ने के बाद जो लगा उसे लिख रहा हूं:

– 'बंकर में जीवन' बहुत ही अच्छा लेख है इसे पढ़ते समय रोंगटे खड़े हो जाते हैं, यद्यपि ग्राफ समझने में थोड़ी दिक्कत हुई परन्तु लेख बहुत ही बढ़िया था। इस तरह के शोधपरक लेख/अनुसंधान के दौरान शोधार्थी अपने कामों का दस्तावेजीकरण करते हैं, ऐसे दस्तावेज़ पढ़ने पर काफी अनूठे और रोचक हो सकते हैं।

– पानी उबलने से संबंधित लेख पढ़ने समझने के लिहाज़ से अच्छा है क्योंकि

हम रोज़ यह क्रिया देखते व करते हैं, पर वास्तव में उबलना क्या है इसे पढ़ा। पर लेख को पढ़ते समय लगा कि इसे थोड़ा ज़्यादा खींचा गया, खास करके दबाव को। इससे लेख थोड़ा-सा बोझिल लगा और बाद में भ्रम होने लगे। दुबारा-तिबारा पढ़ने पर 'फण्डे' साफ हुए।

'शुक्राणु और अंडाणु का निर्माण' लेख ठीक ही था। विपुल कीर्ति के इस लेख में 'घुसेड़कर' शब्द (बॉक्स की पांचवी लाईन, पृष्ठ 60) आया। यहां सम्पादन की ज़रूरत थी क्योंकि नीचे के पैरा में 'डालना' शब्द प्रयुक्त किया गया है।

'बीजों में श्वसन' – रुचि चौरे शुरूआत तो करती हैं... "बिना विशेष उपकरणों के प्रयोग" और सामग्री में कहती हैं "कोनिकल फ्लास्क, बीकर, परखनली, कांच की नली, KOH, एक छेदी कॉर्क।" यानी ये सब सस्ते या बिना लागत के हैं – दूसरा कि सामान्य से स्कूलों में आसानी से उपलब्ध हैं! चित्र में कोनिकल फ्लास्क में धागे से परखनली लटकी है जबकि विवरण में इंजेक्शन की खाली शीशी में KOH भरकर लटकाए जाने का विवरण है। यहां संपादकजी भूल गए कि चित्र और लिखित विवरण में साम्य होना चाहिए।

'तो धरती भी गोल निकली' – लेख में पृष्ठ 65 पर किंवदंती दी गई है कि पृथ्वी हाथियों की पीठ पर टिकी है, हाथी कछुए की पीठ पर खड़े हैं... मैंने तो अब तक यही सुना है कि पृथ्वी शेषनाग पर टिकी है, शेषनाग बैल के सींग पर टिका है।

इस लेख में बाद में कुछ और उल्लेख आना थे... ऐसा लगा। इस वजह से लेख अधूरा-सा लगा!

– 'पर्यावरण शिक्षा और आजीविका' – दुनू रॉय की पुस्तक समीक्षा में किताबों की समीक्षा से ज़्यादा अपने विचार दिए हैं जबकि समीक्षा की मूल भावना ही पुस्तक केन्द्रित (समीक्षित पुस्तक) होनी चाहिए।

पृष्ठ 85 – "विकास का पहिया कई कलियों को रौंदता हुआ निकल चुका है।" यह पंक्ति क्यों जोड़ी गई, समझ से परे है।

इस पूरी समीक्षा में संपादन ज़रूरी था। पर वो भी लेखक के 'भारी' होने से छोड़ दिया गया शायद।

– रमाकांत का भाषा वाला लेख... वे आखिर तक ठीक से समझा नहीं पाए कि क्या कहना चाहते हैं। अंत में वे सचेत तो करते हैं, पर इंगित नहीं करते कि क्या, किससे सचेत रहें।

पूरे 'संदर्भ' में मात्रा, अधूरे शब्द, 'दिमाग - दिमाग़' की गल्तियां और संपादन की त्रुटियां। क्या हो गया है – पटवारी को पंटवारी और भी ढेरों ऐसे शब्द!

संदीप नाईक
कालानी बाग, देवास

बारहवें अंक में छपे लेख 'गति सापेक्ष है' द्वारा सापेक्षता की धारणा को समझाने का प्रयास सराहनीय है, किन्तु यह बात गलत है कि कोपरनिकस ने सर्वप्रथम सूर्यकेंद्रित अवधारणा सामने रखी — उससे एक हजार साल पहले ही इस अवधारणा का जन्म हो चुका था। यह अलग बात है कि बीच के एक हजार साल यह बात भुलावे में पड़ी रही (देखें आर्थर केस्लर की किताब 'स्लीप वॉकर्स')।

दूसरा कि लेख की बाकि बातों से साफ होना चाहिए कि यदि गति सापेक्ष है तो पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है या सूर्य, चांद, ग्रह, तारे — पृथ्वी का, यह बात निर्विवाद नहीं है।

फर्क सिर्फ इतना है कि कौन-सी मान्यता हमारे ब्रह्मांड को समझने के कार्य को सरल बना देती है। प्रयोगों के संबंध में लिखा लेख भी मजेदार है।

नरेश शर्मा, अर्थशास्त्र प्राध्यापक
हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद

बुन्सन बर्नर, हवा में ऑक्सीजन और किताबी प्रयोग

■ रवि दिवाकरन

पानी से भरा बर्तन. . .जलती मोमबत्ती. . . उस पर गिलास को उलटाकर रखा। मोमबत्ती बुझने के बाद जो पानी गिलास में ऊपर चढ़ा क्या वह हवा में ऑक्सीजन की मात्रा को दर्शाता है?
संदर्भ के दसवें अंक में 'बुन्सन बर्नर के बीच छह इंच जगह' शीर्षक से छपे लेख में *मिलिन्द वाटवे* ने सवाल छोड़ा था कि एक मोमबत्ती से किए गए प्रयोग में जितना पानी चढ़ा, दो मोमबत्तियां लगाने पर उससे कहीं अधिक ऊंचाई तक पानी गिलास में ऊपर चढ़ा। इससे क्या निष्कर्ष निकालें. . . उससे आगे. . .।

रसायन शास्त्र का शिक्षक होने के कारण मैंने हवा में ऑक्सीजन की मात्रा निकालने के स्कूल की किताबों में दिए गए प्रयोग को लेकर लेखक (मिलिन्द वाटवे) के अवलोकनों को बहुत दिलचस्पी से पढ़ा। इसके बाद मैंने इस प्रयोग को बहुत ध्यान से कुछ इस तरह दोहराया।

सब से पहले तो मेरा ध्यान इस तरफ गया कि आमतौर पर पानी पीने के गिलास शंकुवत होते हैं – नीचे से कम चौड़े और ऊपर की ओर इनकी चौड़ाई बढ़ती जाती है। इसलिए इनकी दीवार पर बराबर दूरी पर लगाए निशान, आयतन की बराबर मात्रा को नहीं दर्शाते। और दूसरा कि जब

मिलिन्द वाटवे का लेख इंडियन एकेडमी ऑफ साइंसेज, बैंगलौर की साइंस मैगज़ीन रेज़ोनेन्स के फरवरी 1996 अंक में प्रकाशित हुआ था। उपरोक्त लेख रेज़ोनेन्स के मई 1996 अंक से लिया गया है।

मोमबत्ती को गिलास में रखते हैं तो वह अपने आयतन के बराबर जगह घेर लेती है। इसलिए मैंने माना कि दूसरी मोमबत्ती रखे जाने से प्रभावी आयतन और कम हो जाएगा और इस वजह से भी पानी का स्तर ऊपर हो जाएगा।

इसी बीच सौभाग्य से कांच का एक ऐसा खूबसूरत गिलास मेरे हाथ लग गया जिसकी दीवारें ऊपर से नीचे तक एकदम सीधी थीं यानी कि चौड़ाई ऊपर से नीचे तक एक बराबर। अपने प्रयोग में मैंने इसी गिलास का इस्तेमाल किया। इसी तरह मोमबत्तियों के कारण आने वाले आयतन के अंतर को निरस्त करने के लिए मैंने कुछ इस तरह का तरीका अपनाया — गिलास की ऊंचाई की आधी ऊंचाई की तीन मोमबत्तियां लीं, इन्हें सीधा रखे गिलास के अंदर रखा और फिर गिलास को पानी से भर दिया। इसके बाद मोमबत्तियों को बाहर निकाल लिया। इस कारण गिलास के अंदर पानी का स्तर गिर गया। इस स्थिति में गिलास में पानी का आयतन, तीन मोमबत्तियों की उपस्थिति में प्रभावी आयतन के बराबर है। गिलास में पानी के इस स्तर को चिंहित कर लिया और कागज़ की एक पट्टी लगाकर इस ऊंचाई को 10 बराबर भागों में बांट लिया और इन पर 10%, 20% ... 100% के निशान लगा लिए। इस पैमाने का शून्य गिलास के खुले वाले सिरे पर रखा।

अब एक टब लेकर तीन मोमबत्तियों को उसके तले पर चिपका लिया। इन मोमबत्तियों को हमेशा चिपके रहने दिया ताकि मोम बत्तियों की संख्या कम या ज़्यादा किए जाने से आयतन में जो अंतर आता है उससे बचा जा सके। इसके बाद टब में एक गिलास पानी डाला। एक मोमबत्ती को जलाया और तीनों को गिलास से ढंक दिया। जब मोमबत्ती बुझी तो गिलास में पानी ऊपर चढ़ा और कुछ मिनट बाद (जबकि उपकरण का तापमान भी सामान्य हुआ) इसने 15% प्रभावी आयतन के बराबर जगह घेर ली। इस प्रयोग को कई बार दोहराया गया। हर बार टब का पानी बदल-बदल कर उतना ही ताज़ा पानी लिया गया ताकि कार्बन डाइऑक्साइड घुलने जैसे प्रभाव से बचा जा सके। हर बार पानी ने 15 से 18% जगह को घेरा।

दो में और . . तीन में और भी

यही प्रयोग अब दो मोमबत्तियों को एक साथ जला कर दोहराया गया। इस बार पानी ने ऊपर चढ़कर 30 प्रतिशत प्रभावी आयतन के बराबर जगह घेरी। इसी तरह प्रयोग तीनों मोमबत्तियों को साथ जलाकर दोहराया। यह पाया गया कि इस बार पानी का तल, प्रभावी आयतन के

लगभग 45% के निशान तक पहुंच गया। *इससे लगता है कि गिलास के अंदर हवा के आयतन में आयी कमी, इस बात पर निर्भर करती है कि एक बार में कितनी मोमबत्तियां जलाई जा रही हैं, (जैसे कि यहां प्रति मोमबत्ती लगभग 15 प्रतिशत) न कि ऑक्सीजन की मात्रा पर।*

इस प्रक्रिया की एक संभावित व्याख्या यह हो सकती है कि मोमबत्ती को गिलास से ढकने में हमेशा कुछ सेकण्ड लग जाते हैं, इसी समय के बीच अंदर की हवा को गर्म होकर फैलने और नीचे से बाहर निकलने का मौका मिल जाता है। जब मोमबत्ती को ढक रहे गिलास का मुंह पानी के स्तर से बंद हो जाता है और मोमबत्ती बुझ जाती है तो अंदर की हवा ठंडी हो कर, सिकुड़ जाती है। इस तरह गिलास के अंदर पानी का चढ़ना बाहर निकल गई हवा को दर्शाता है।

जब ज़्यादा मोमबत्तियां जलाई जाती हैं तो उसी अनुपात में गर्मी भी बढ़ जाती है और गिलास में से बाहर निकलने वाली हवा की मात्रा का अनुपात भी। *इत्तफाक से प्रत्येक मोमबत्ती से 15 से 18 % हवा फैल कर बाहर निकलती है जो कि हवा में ऑक्सीजन की मात्रा के काफी नज़दीक है।* इसलिए केवल एक मोमबत्ती से प्रयोग करने पर यह मान लिया गया कि ऑक्सीजन के इस्तेमाल हो जाने के कारण पानी ऊपर चढ़ा। असल में अगर ऑक्सीजन के इस्तेमाल होने के कारण पानी ऊपर चढ़ रहा होता, तो प्रयोग के दौरान, उस समय भी गिलास के अंदर पानी का स्तर धीरे-धीरे बढ़ता जाना चाहिए था जब मोमबत्ती जल रही होती है। पर देखा गया है कि मोमबत्ती के जलते रहने के दौरान

जब पानी के टब में लगी जलती हुई मोमबत्ती के ऊपर गिलास ढंका जाता है तो नीचे से कुछ हवा बाहर निकल जाती है।
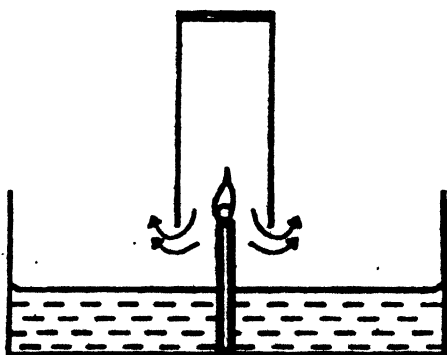
बहुत थोड़ा पानी ही ऊपर चढ़ता है और जैसे ही मोमबत्ती बुझती है, पानी तेज़ी से ऊपर चढ़ता है।

इसके अलावा मोमबत्ती (जो हाइड्रोकार्बन की बनी होती है) – जब जलती है तो यह क्रिया होती है:

$$C + O_2 \longrightarrow CO_2$$
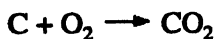
जिसमें ऑक्सीजन के प्रत्येक अणु से कार्बन डाइऑक्साइड का एक अणु बनता है जिससे आयतन में कोई बदलाव नहीं होता (इस प्रक्रिया में बने पानी के आयतन को नगण्य मान सकते हैं, क्योंकि वह द्रव अवस्था में होता है)।

जब लकड़ी के कोयले (चारकोल) को पारे के ऊपर उल्टा करके रखे गए जार में जलाया जाता है तो भी ठीक ऐसा ही होता है। जब पानी इस्तेमाल किया जाता है तो वह कार्बन डाई-ऑक्साईड का कुछ हिस्सा अवशोषित कर लेता है, क्योंकि हवा के मुकाबले पानी में कार्बन डाईऑक्साईड की घुलनशीलता ज़्यादा होती है।

यह भी पाया और रिकॉर्ड किया गया है कि जब एक बंद जार में जलता हुआ लकड़ी का एक टुकड़ा बुझता है तो बाकी बची हवा में केवल 2.5% कार्बन डाईऑक्साइड होती है और उसमें 17.5% ऑक्सीजन फिर भी बची रहती है!

अगर देखें तो ऐसा लगता है कि इतने सालों से विद्यार्थियों को जो प्रयोग करवाया जाता रहा है वह हवा में ऑक्सीजन की मात्रा बिल्कुल नहीं दर्शाता!

इस प्रयोग के विस्तृत विवरण के लिए देखें :
संदर्भ अंक-4 (पृष्ठ 15), अंक-5 (पृष्ठ 38), अंक-10 (पृष्ठ 7)

रवि दिवाकरन: सेंट अलबर्ट्स कॉलेज, एरनाकुलम, केरल के रसायनशास्त्र विभाग में पढ़ाते हैं।
मूल लेख अंग्रेजी में। अनुवाद: शशि सक्सेना।
शशि सक्सेना: दिल्ली के दीनदयाल उपाध्याय कॉलेज में रसायन शास्त्र पढ़ाती हैं।

रवि दिवाकरन ने इस लेख में हवा में ऑक्सीजन की मात्रा पता करने के लिए पाठ्यपुस्तकों में दिए जाने वाले मोमबत्ती के प्रयोग पर कुछ नए तथ्य प्रस्तुत किए हैं जो इस विषय पर संदर्भ के पिछले अंकों में छपे लेखों के सिलसिले में और जानकारी जोड़ते हैं।

परन्तु गिलास में कितना पानी ऊपर चढ़ा इसके बारे में उन्होंने जो तरीका सुझाया है – उसके बारे में सोचें और अपने सुझाव, टिप्पणियों को हमें जरूर लिखें। हमारा पता: संदर्भ, द्वारा एकलव्य, कोठी बाज़ार, होशंगाबाद – 461 001.

संपादक

सर जो तेरा चकराए, या पैर फिसले जाएं..

धरती का घूमना वाकई चक्कर में डाले !

अनीता रामपाल

अगर धरती घूम रही है तो उसका घूमना हमें महसूस क्यों नहीं होता. . . इस सवाल ने अच्छे-अच्छों का सर चकराया है। जब आर्यभट ने कहा कि धरती घूमती है तो कई और खगोलशास्त्रियों ने इसे नकार दिया। हो सकता है कि आज ये तर्क हमें अजीब और मज़ेदार लगें पर उस समय तो ये अपने समय की समझ और मान्यता को प्रकट करते थे।

एक बार सवालीराम से इंद्रा ने पूछा था कि लोग कहते हैं धरती घूमती है; लेकिन हमें महसूस क्यों नहीं होती?

संदर्भ (अंक-12) में इसका जवाब छपा था जिसका शीर्षक था 'गति सापेक्ष है'। सवालीराम ने बड़े मज़े-मज़े से समझाया था कि जैसे रेलगाड़ी में बैठे हुए कभी-कभी यह नहीं पता चलता कि वह चल रही है या नहीं उसी तरह धरती पर बैठे हमें उसकी गति का अहसास नहीं होता। क्या बात है कि हम धरती की तूफानी गति से बिलकुल बेखबर हैं? हमें कोई कहे कि हम लगभग एक लाख कि.मी. प्रति घंटा की गति (31 कि.मी. प्रति सेकंड) से घूम रहे हैं तो चौंकना तो दूर, हमारा सर ही चकरा जाए। हम में से कितने हैं जो

यह जानते थे या जिन्होंने अपने से पूछा था कि आखिर हमें यह सब महसूस क्यों नहीं होता। मज़े की बात है कि यह सवाल आज ही नहीं सैकड़ों सालों पहले से लोग पूछते आए हैं। इतिहास में जब-जब किसी ने सुझाया कि सूर्य धरती का चक्कर नहीं लगाता बल्कि धरती स्वयं अपनी धुरी पर घूम रही है, यही सवाल बार-बार उठ खड़ा हुआ। और इसी से जुड़े कई अन्य सवाल भी जो वाकई अच्छे-अच्छों को चक्कर में डाल दें। इस लेख में हम इन्हीं सवालों पर चर्चा करेंगे और इतिहास के भूले बिसरे पन्नों से इन्हें जगाकर अपनी समझ को कुछ रोशन करेंगे।

जब सवालीराम चकराए

एक बात पहले ही साफ करनी ज़रूरी है। धरती के घूमने की गुत्थी को सुलझाते हुए सवालीराम ने रेल के डिब्बे का उदाहरण दिया था। चलती गाड़ी में बैठकर गेंद को ऊपर उछाला था। फिर पूछा था कि गेंद वापस हाथ में ही क्यों आकर गिरती है। दरअसल इसका जवाब देते हुए सवालीराम खुद भी कुछ चकरा गए थे। उन्होंने हवा की लंबी-सी दलील दी थी। कहा था, "बात यह है कि डिब्बा जब गतिशील है तो उसके अंदर की हवा भी उसी गति से चल रही है। इस लिए जब गेंद हवा में उछाली तो वह भी उसी गति करती हवा में है जो डिब्बे के साथ है, और आप जिस तरह डिब्बे में बैठे-बैठे आगे बढ़ रहे हैं, हवा भी आगे बढ़ रही है। इसलिए जब भी गेंद नीचे गिरेगी आप ही के पास गिरेगी।"

यह तर्क सही नहीं है। हवा की यहां कोई भूमिका नहीं है। हवा हो या न हो, गेंद चलती गाड़ी में भी उसी जगह गिरेगी जैसे रुकी में।

. . क्यों भई?

सवालीराम यह कहकर उलझ गए थे कि चलती गाड़ी में जब गेंद वापस आई तो "इस बीच गाड़ी कुछ आगे बढ़ी"। दरअसल भ्रम यहीं से शुरू होता है। वास्तव में गाड़ी चल रही है इसलिए उसमें रखी हर चीज़ उसी गति से चल रही है। चप्पल, सैंडल, बोरिया, बिस्तरा — सभी उसी गति से उसी दिशा में बढ़ रहे हैं। (एक ही गति से चलती हुई ये चीज़ें आपस में स्थिर हैं चूंकि आपस में उनकी सापेक्ष गति शून्य है।) अब जब हम गेंद को ऊपर उछालते हैं तो ऊपर जाने के साथ-साथ गेंद गाड़ी की दिशा में भी गतिशील रहती है। गेंद जब नीचे गिरती है तो उतनी ही आगे बढ़ी हुई होती है जितनी गाड़ी, और

गाड़ी में पड़ी अन्य चीज़ें। गाड़ी की दिशा में गेंद और गाड़ी, दोनों की सापेक्ष गति वही रहती है – शून्य। इसीलिए गेंद ठीक उसी जगह गिरती है, जैसे मानो गाड़ी चल ही न रही हो। गाड़ी समान गति से चल रही हो तो उसके अंदर होने वाली क्रियाओं पर कोई फर्क नहीं पड़ता। ऐसा नहीं होता तो सोचिए, हम भला पानी कैसे उड़ेलते? बोतल से पानी उड़ेलते तो पानी गिलास में न जाकर, कहीं और गिरता।
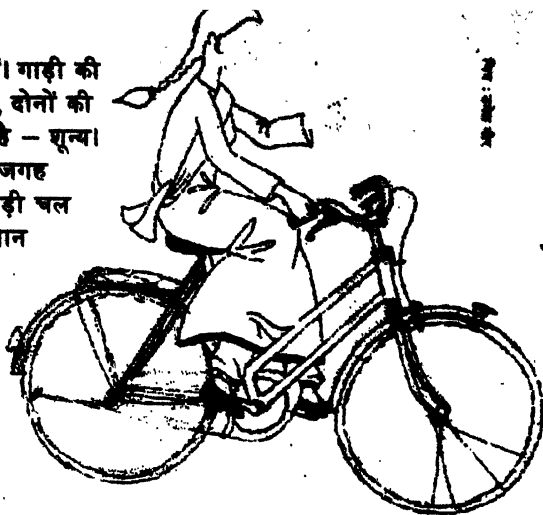
साइकिल और केला

क्या किसी स्थिति में ऐसा होते देखा है आपने? नहीं, गाड़ी के चलते ही या रुकते ही जैसी स्थितियों में तो बात दूसरी है – चूंकि वहां गति समान नहीं। पर समान गति से चलते कभी आपने पाया है कि चीज़ गिराओ कहीं और गिरती कहीं और है? साइकिल पर चलते हुए मेरा निशाना कई बार चूक जाता है। हाथ में केले का छिलका लिए कूड़े के ढेर पर फेंकना चाहा पर छिलका बहुत आगे जाकर गिरा। नहीं, निशाना मेरा इतना खराब तो नहीं। केवल इस बात से बेखबर रही कि हाथ में पड़े छिलके और कूड़े की सापेक्ष गति 15 कि.मी. प्रति घंटा थी। यह ध्यान नहीं रहा कि छिलका भी साइकिल की गति से चल रहा है, इसलिए ठीक ढेर के सामने आकर फेंकेंगे तो छिलका आगे ही जाकर गिरेगा। निशाना सही लगाना है तो अपनी गति का अनुमान लगाकर छिलका कुछ पहले ही फेंकना होगा। इसका एक रोचक खेल बन सकता है। लोग तेज़ी से दौड़कर या साइकिल पर आते हुए एक टोकरी में गेंद या पत्थर फेंककर देखें कि उनका निशाना कितना अच्छा है। यानी गेंद और टोकरी की सापेक्ष गति का वे कितना सही अनुमान लगा पाते हैं।

बाढ़ आने पर हवाई जहाज़ से भोजन की थैलियां गिराई जाती हैं तो पायलट को ऐसा ही अनुमान लगाना पड़ता है। जहाज़ की गति बहुत तेज़ होती है इसलिए केवल अनुमान नहीं पूरा गणित लगाना पड़ता है। मालूम करना पड़ता है कि उस ऊंचाई से गिरने में वस्तु को कितने मिनट (या सेकंड) लगेंगे और उतने समय में जहाज़ (और उसमें पड़ी थैलियां) कितना आगे बढ़ जाएगा। फिर उतनी ही दूर, पहले से भोजन गिराना पड़ता है ताकि नीचे पहुंचने तक सही निशाने पर गिरे। और हां, जब हवाई जहाज़ बहुत ऊंचाई से बम गिराते हैं तो यह गणना और भी ध्यान से करनी पड़ती है। हवाई मामलों में कई बार पृथ्वी की गति का ध्यान भी रखना पड़ता है।

खैर, इन हवाई बातों को छोड़ अब लौट आएं धरती पर। बात उठी थी कि सवालीराम जी ने हवा का संदर्भ सही नहीं दिया था। रेल के डिब्बे में हवा होने से गेंद पर कोई फर्क नहीं पड़ता। परन्तु पृथ्वी के घूमने में हवा को लेकर एक पेचीदा सवाल ज़रूर उठता है। अगर हमारी पृथ्वी लगभग एक लाख कि.मी. प्रति घंटा की गति से घूम रही है तो हमें हवा की आंधी क्यों महसूस नहीं होती? ऐसी साएं-साएं करती तूफानी आंधी जो हमें धरती से ही उड़ा ले जाए? चूंकि जब हम हवा में हाथ घुमाते हैं तो हाथ पर हवा की हलचल महसूस होती है। फिर इतनी तेज़ घूमती पृथ्वी क्यों हवा में तूफान नहीं पैदा करती? सोचिए, कोई जवाब उठ रहा है मन में – चाहे वह समझ का छोटा-सा बुलबुला ही हो।

थोड़ा इतिहास भी

ठीक ऐसे ही सवालों का तूफान इतिहास में बार-बार उठा है। करीब डेढ़ हज़ार साल पहले जब आर्यभट ने सुझाव दिया था कि हमारी पृथ्वी घूमती है तो कई खगोलशास्त्री इस बात को पचा नहीं पाए थे। क्योंकि उस समय लोग यही मानते थे कि सूर्य ही पृथ्वी के इर्द-गिर्द घूमता है – आज भी दिखता तो ऐसा ही है। उस समय भी कई खगोल शास्त्रियों और पंडितों ने यही तर्क दिया था कि जब हमें महसूस ही नहीं होता तो हम कैसे मान लें कि पृथ्वी घूम रही है। इतिहास के पन्नों और उन्हीं विद्वानों के ग्रंथों में झांककर देखते हैं कि वे लोग इस बारे में क्या सोच रहे थे, सवाल पूछ रहे थे।

पांचवी शताब्दी में आर्यभट ने अपनी किताब 'आर्यभटीय' में लिखा था कि पृथ्वी घूमती है और

नक्षत्र स्थिर हैं। उन्होंने लिखा कि पृथ्वी 43,20,000 सालों में 1,58,22,37,500 बार घूमती है। एक श्लोक में वे कहते हैं—

अनुलोमगतिर्नौस्थः पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत्।
अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि लङ्कायाम्॥

(नौस्थ – नाव में स्थित, भानि – तारे)

अर्थः एक आगे को चलती हुई नाव में बैठे व्यक्ति को (नदी किनारे की) स्थिर वस्तुएं पीछे को जाती दिखती हैं। उसी तरह लंका (भूमध्य रेखा पर) से स्थिर तारों को देखने पर वे तारे पश्चिम की ओर जाते नज़र आते हैं।

इस कथन का बहुत विरोध हुआ। कई पंडितों ने इस श्लोक का अलग मतलब निकाला। छठी शताब्दी के मशहूर खगोलशास्त्री वराहमिहिर ने अपनी पुस्तक 'पंचसिद्धांतिका' में लिखा कि पृथ्वी तो अचल है, "दूसरे लोग कहते हैं कि पृथ्वी घूम रही है, जैसे कुम्हार के चक्के पर हो। वे कहते हैं कि नक्षत्र स्थिर हैं। यदि ऐसा होता तो पक्षी लौटकर अपने घोंसलों तक कैसे पहुंचते। और तो और, यदि पृथ्वी एक दिन में एक चक्कर लगा रही होती तो फिर सभी पतंगे, पक्षी आदि पश्चिम की ओर बह जाते। पर यदि पृथ्वी तेज़ नहीं धीरे घूम रही है तो फिर एक दिन में एक चक्कर कैसे पूरा कर लेती है?"

ब्रह्मगुप्त जैसे विख्यात खगोलशास्त्री भी आर्यभट से सहमत नहीं थे। सातवीं शताब्दी में 'ब्राह्मस्फुटसिद्धांत' में उन्होंने लिखा कि पृथ्वी घूम नहीं सकती। उनके तर्क और सवाल कुछ इस प्रकार थे — यदि पृथ्वी घूमती होती तो कोई भी लौटकर घर नहीं आ सकता था। घर से बाहर जाता तो उस बीच उसका घर पूर्व दिशा में बहुत आगे बढ़ गया होता। यही नहीं, पृथ्वी इतनी तेज़ घूमती तो सभी खड़ी चीज़ें लुढ़क जातीं।

बताइए, आया न कुछ मज़ा? यह देखकर कि बड़े-बड़े विद्वान भी वैसे ही सवाल उठा रहे थे जो आज हम उठा रहे हैं। वे भी उन्हीं उलझनों में फंसे थे जिन से आज भी हम कई बार धोखा खा रहे हैं। सवालीराम ने कहा गेंद के वापस नीचे गिरने तक गाड़ी कुछ आगे बढ़ गई होगी। यह वैसे ही है जैसे कहना कि पक्षी या इंसान के लौटने तक उसका घर मालूम नहीं कितना आगे निकल गया होगा। इस शंका का स्पष्टीकरण तो अब आप कर ही सकते हैं। रेलगाड़ी या पृथ्वी चल रही हो तो फर्क नहीं पड़ता चूंकि उन पर पड़ी हर चीज़ उसी गति से चलती है, इसलिए पीछे रह जाने

का सवाल ही नहीं उठता। पृथ्वी पर यदि कोई चीज़ गतिशील है तो वास्तव में उसकी दो गतियां हैं — एक पृथ्वी की गति के कारण, और दूसरी उसकी अपनी गति (किसी अन्य कारण से)। जैसे ऊपर उछाली गई गेंद ऊपर भी जाती है और पृथ्वी की दिशा में भी गतिशील है। या साइकिल पर से फेंका गया छिलका आगे भी बढ़ता है (साइकिल की दिशा में उसकी गति के कारण) और कूड़ेदान की तरफ भी जाता है (हमने उस दिशा में फेंककर उसे गति प्रदान की)।

दरअसल यहां छिलके की एक गति नीचे की ओर भी है, चूंकि पृथ्वी उसे नीचे खींच रही है — इसीलिए वह नीचे गिरता है — पर अभी इससे ज़्यादा परेशान मत होना। बात सिर्फ इतनी है कि पृथ्वी पर रहने वाले हम पृथ्वी की गति से काफी बेखबर रहते हैं। पृथ्वी की गति का असर नहीं देख पाते क्योंकि क्रियाएं वैसी होती हैं मानो पृथ्वी घूम ही न रही हो — आखिर, सभी चीज़ें उसी गति से चल रही हैं। हां, और हवा का सारा आवरण भी पृथ्वी अपने साथ ही लेकर घूमती है। यह पृथ्वी के खिंचाव (गुरुत्वाकर्षण) का कमाल है कि पूरा वायुमंडल उसके साथ घूमता है। इसीलिए हमें वायुमंडल पृथ्वी के सापेक्ष स्थिर ही लगता है, घूमने से कोई तूफानी आंधी महसूस नहीं होती।

पृथ्वी के घूमने को लेकर सवालों का किस्सा शताब्दी-दर-शताब्दी चलता रहा। आठवीं शताब्दी में लल्ल खगोलशास्त्री ने लिखा, "अगर पृथ्वी घूमती होती तो ऊपर को छोड़े गए सभी तीर पश्चिम की ओर गिरते। बादल हमेशा पश्चिम की तरफ चलते दिखते।" आर्यभटीय पर व्याख्या करते हुए भास्कर (प्रथम) ने तो यह तक कहा कि आर्यभट का आशय ही अलग था। वे कह रहे थे कि हवा के 'प्रवाह' से नक्षत्र पश्चिम को चलते हैं इसलिए हमें लगता है कि पृथ्वी घूम रही है। अधिकतर विद्वान आर्यभट के कथन का खंडन करते रहे। कई तो वेदों तक का सहारा लेते। वे कहते कि वेदों में दिया है "पृथिवी प्रतिष्ठा" यानी पृथ्वी अचल है इसलिए आर्यभट और उनके साथियों का कथन वेदों और तर्क दोनों ही के विरोध में है। कुछ ही ऐसे विद्वान थे जिन्होंने पृथ्वी के घूमने का समर्थन किया। नौवीं शताब्दी में पृथुदका ने हिम्मत बांधकर साफ-साफ लिखा था, "लोकभय के कारण ही भास्कर आदि ने उस कथन की अलग व्याख्या दी। नक्षत्र तो स्थिर हैं।

पृथ्वी के घूमने से ही रोज़ नक्षत्रों और ग्रहों का उदय और अस्त दिखाई देता है।"

यह वाद-विवाद, तर्क-वितर्क और सवाल-जवाब तो शताब्दियों तक चलता रहा। एक ही बात को लेकर कितना चिंतन हुआ। विज्ञान में अक्सर ऐसा ही होता रहा है कि एक नया क्रांतिकारी सुझाव वैज्ञानिकों की स्थापित मान्यताओं को कई बार झकझोर देता है, हिला देता है। ऐसी हलचल पैदा कर देता है कि मानो वैज्ञानिकों के पैरों तले की ज़मीन ही खिसक गई हो। वे फिर अपने पहले के सिद्धांतों को कायम रखने की पुरज़ोर कोशिश करते हैं। किसी-न-किसी तर्क से, या प्रयोग से, वे साबित करना चाहते हैं कि उनके मान्य सिद्धांत ही सही हैं। इस खींचातानी में चंद वैज्ञानिक नए सुझाव की पैरवी करते हैं और उसके समर्थन में नए सबूत पेश करते हैं। अक्सर इस प्रक्रिया से गुज़रकर ही नया सिद्धांत बनता है। एक विख्यात वैज्ञानिक ने इस कशमकश को व्यक्त करते हुए कहा कि नए सिद्धांत तभी स्थापित होते हैं जब पुराने सिद्धांत के पक्षधर वैज्ञानिक गुज़र जाते हैं और नई पीढ़ी के नौजवान शुरू से ही नए सुझाव का परिचय पाकर विषय में दाखिल होते हैं।

खैर, हम बात केवल वैज्ञानिकों की नहीं कर रहे। हमें तो एक गहरी
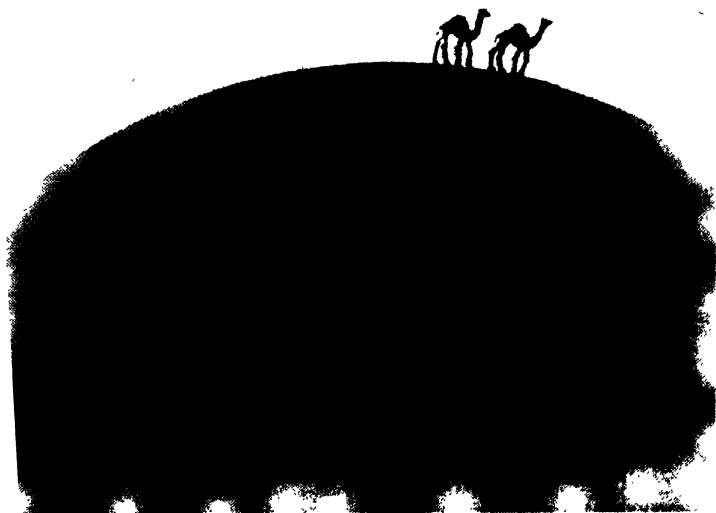
चिंता है। यह कि हर नई पीढ़ी के बच्चे जब सबसे पहले यह सुनते हैं कि पृथ्वी तेज़ी से घूम रही है तो क्यों नहीं ढेरों सवाल उठाते। आखिर इस कथन ने तो अच्छे-अच्छों को हिला दिया था। फिर हमारे सभी बच्चे इतने निष्क्रिय भाव से अपनी मूक स्वीकृति क्यों दर्शाते हैं। आखिर बच्चे तो हमेशा सवाल पूछने और नई बातें जानने की इच्छा रखते हैं।

क्यों नहीं तुरन्त पूछ बैठते कि 'अरे, पृथ्वी घूमती है तो हमें महसूस क्यों नहीं होता?' उनकी स्वाभाविक जिज्ञासा को हम किस तरह से कुंठित कर देते हैं? सोचिए, हमारी शिक्षा प्रणाली में आए दिन ऐसे कितने कथन सहज ही बच्चों पर थोप दिए जाते हैं। ऐसे कथन जो वास्तव में पचाने मुश्किल हैं और जिनको पूरी तरह समझ पाना बड़े-बड़ों के लिए दुश्वार है। कम-से-कम हम खुलकर सवाल-जवाब, तर्क-वितर्क का माहौल ही बना पाते तो कक्षा में समझ विकसित करने का मौका मिल पाता।

दूसरा, कच्ची उम्र में कथनों की बौछार से बच्चे पहले से ही सहम जाते हैं। सोचिए, तीसरी या चौथी में रटाए गए कितने ही कथन होंगे जिनको हम भी शायद ठीक से नहीं समझते। सवालों को उठने तो दें, अपने मन में भी, और बच्चों के मन में भी। सवालों और उलझनों वे मंथन से ही समझ की प्रक्रिया शुरू हो सकती है।

अनीता रामपाल: होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से संबद्ध।

इस विषय पर और अधिक जानकारी के लिए देखें:

1. इंडियन एस्ट्रोनॉमी – ए सोर्स बुक, संपादक: बी. वी. सुबारैयप्पा और के. वी. शर्मा, नेहरू सेंट बंबई।

2. ए ग्लिम्प्स ऑफ आर्यभट्ट्स थियरी ऑफ रोटेशन ऑफ अर्थ (इंडियन नेशनल साइंस एकेड के लिए लिखा गया एक पर्चा), लेखक: बीना चटर्जी।

मुझे क्या मालूम हुआ

लक्ष्मी नारायण चौधरी

बच्चों का मन बीच-बीच में कक्षा से उचटता रहता है। एक शिक्षक के लिए इतना आसान नहीं होता यह सोचना कि ऐसी स्थिति से वह कैसे निपटे। लगातार कुछ नया सोचते रहना पड़ता है, सजग रहना पड़ता है। ऐसी ही स्थितियों में आ फंसी कक्षा का रोचक दृश्य।

कक्षा: 1, 2 और 3
विषय: भाषा, पर्यावरण, कला और गणित
बच्चों की संख्या: 72
दिनांक: 10 नवंबर 1995

मैंने बच्चों से कहा, "कक्षा 1, 2 और 3 के तीन-तीन दोस्त मेरे पास आओ।" फिर मैंने 9-9 बच्चों को आठ टोलियों में बिठाया और कहा, "कक्षा-1 के बच्चे खुशी-खुशी* किताब निकालें। सभी बच्चे इस किताब का मुख्य पृष्ठ देखें।" (मैंने अपनी किताब को दिखाते हुए कहा)

"इस चित्र में कौन है?" (मैंने ऊंगली रखकर पूछा)

– *"मेंढक है।'*

"मेंढक के दोनों हाथों में क्या है?"

– *"एक हाथ में लकड़ी है।"*

– *"दूसरा हाथ खाली है।"*

– *"दूसरे हाथ में कुछ नहीं है।"*

---

* खुशी-खुशी – एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में तैयार की गई कार्यपुस्तक।

"मेंढक क्या कर रहा है?"

– "चक्का चला रहा है।"

अब चित्र को देखो और बताओ कौन-कौन है?

– "मेंढक और बगुला है।"

"दोनों क्या कर रहे हैं?"

– "बातें कर रहे हैं।"

– "बैठे हैं।"

"मेंढक बगुले से क्या बोल रहा होगा?"

– "तुम्हारी टर्र-टर्र मुझे अच्छी लगती है।"

– "तुम मुझे अच्छे लगते हो।"

– "तुम क्या कर रहे हो?"

– "मैं तुमको खाऊंगा।"

"मेंढक क्या बोला होगा?"

– "मुझे अभी मत खाओ।"

— *"मैं चक्का चला रहा हूं।"*

अब चित्र को देखो, बगुले ने क्या किया?

— *"मेंढक को पकड़ा।"*

— *"चक्के को पकड़ा।"*

"मेंढक ने क्या किया?"

— *"मेंढक ने चक्का पकड़ाया।"*

— *"बगुले को चक्का पकड़ाया।"*

अब इस चित्र को देखो और बताओ, मेंढक ने क्या किया?

— *"वह नदी में कूदा।"*

— *"नदी में कूदकर जान बचाई।"*

"बगुले का मुंह क्यों खुला रहा?"

— *"उसने चक्का पकड़ लिया है।"*

"इसके बाद क्या हुआ होगा?"

— *"मेंढक भाग गया होगा।"*

"क्या बगुले का मुंह खुला ही रहा होगा?"

— *"बगुले ने सिर को झटककर चक्का फेंका होगा।"*

— *"चक्का निकाल दिया होगा।"*

"अच्छा कहानी सुनोगे?" सारे बच्चों ने ज़ोर से कहा, "हां सुनेंगे।"

"ठीक है तो तुम चित्रों को देखना, मैं कहानी सुनाना शुरू करता हूं।"

"एक मेंढक उछलता-कूदता जा रहा था, जाते-जाते उसे एक चक्का दिखा। उसने चक्का उठाया और पास में पड़ी लकड़ी उठाई। अब एक हाथ में लकड़ी और दूसरे हाथ से चक्का चलाया। जब चक्का रुकने लगता, तो लकड़ी से धक्का लगाता जाता। इस तरह चलते-चलते वह नदी के किनारे पहुंचा ही था कि एक बगुले ने उसे देखा और कहा, "मैं तुम्हें खाऊंगा।"

मेंढक बोला, "अभी मैं चक्का चला रहा हूं। थोड़ी देर बाद खा लेना।"

बगुला बोला, "नहीं, मैं तुम्हें अभी खाता हूं" और उसने अपना मुंह खोला। किन्तु मेंढक ने झट से बगुले के मुंह में चक्का पकड़ाया और पानी में कूद गया।

अच्छा, अब आगे क्या हुआ होगा? तुम लोग बताओ।

कुछ बच्चों ने कहा – मेंढक भाग गया और कुछ ने कहा बगुले का मुंह खुला रह गया।

"अच्छा तुम बताओ आगे क्या हुआ होगा?" मैंने फिर पूछा। इस बीच कक्षा में अजीब शोर मचा हुआ था।

मैंने दोनों हाथ ऊपर करके पंजों को गोल-गोल घुमाते हुए कहा – मेरे जैसा करो? बच्चों ने मुझे देखा और मेरी तरह करने लगे। कुछ देर बाद हाथों को नीचे करके तीन तालियां बजाईं।

सारे बच्चों ने भी ऐसा किया। यह अभिनय एक बार और दोहराया। पूरी कक्षा शांत हो गई।

मैंने अपना सवाल फिर दोहराया। मेंढक नदी में कूद गया और बगुले का

मुंह खुला रह गया, उसके बाद क्या हुआ होगा? सब लोग बारी-बारी बताओ?

सभी बच्चों ने बारी-बारी बताया। दस बच्चों ने कहा — मेंढक कूदकर भाग गया और बगुले का मुंह खुला रह गया। आठ बच्चों ने कहा— मेंढक नदी में कूदा और बगुले ने गर्दन को झटका देकर चका फेंका/निकाला। बारह बच्चों ने कहा — बगुले ने सिर को झटका दिया तो चका गले में अटक गया/पहन लिया। इन्हीं बच्चों से मैंने पूछा।

"अच्छा, बगुले ने चका पहनने के बाद क्या किया होगा?" चार बच्चों ने कहा— बगुले ने पैर से चका निकाला होगा? आठ बच्चों ने कहा— चका पहने पहने घूमता रहा होगा।

अब बताओ "मेंढक कहां रहता है?"

— *"पानी में।"*

— *"ज़मीन पर।"*

"बगुला कहां रहता है?"

— *"पेड़ पर।"*

— *"ज़मीन पर।"*

— *"पानी पर।"*

"मेंढक क्या-क्या खाता होगा?"

— *"कीड़े-मकोड़े, अनाज, मछली।"*

— *"कीड़े-मकोड़े।"*

— *"अनाज।"*

"मेंढ़क कैसी आवाज़ करता है?"

— *"टर्र-टर्र-टर्र।"*

"मेंढक किन दिनों में अधिक दिखते हैं और टर्र-टर्र करते हैं?"

—*"बरसात में।"*

—*"पानी गिरता है जब।"*

"मेंढ़क कितना बड़ा होता होगा?"

— (हाथों को दिखाकर) "इतना बड़ा होता है।" कुछ ने बताया।

"तुमने बगुला कहां देखा था?"

— *"पेड़ पर।"*

— *"नदी पर।"*

"बगुला किस रंग का होता है?"

— *"सफेद होता है।"*

"मेंढ़क के कितने पैर होते हैं?"

— *"चार पैर होते हैं।"*

"मेंढक की कितनी आंख होती हैं?"

— *"दो आंख होती हैं।"*

"अच्छा, अब सभी लोग मैदान में चलो और लाइन से खड़े हो जाओ?"

सभी बच्चे मैदान पर पहुंचकर लाइन से खड़े हो गए। मैंने कुछ बच्चों को व्यवस्थित किया और कहा, "मेंढक कैसे चलता है?"

सभी बच्चों ने उछलते-कूदते, छलांग मारते हुए चलकर दिखाया।

"अच्छा, अब यह बताओ बगुला कैसे उड़ता है?"

सभी बच्चे बगुले के उड़ने का

अभिनय करने लगे।

इसके बाद मैंने कहा, "अब सभी कमरे में चलो और अपनी जगह पर बैठो?"

सभी बच्चों के व्यवस्थित बैठने के बाद बच्चों से कहा, "यहां फर्श पर शब्द चित्र कार्डों में से मेंढक और बगुले का शब्द चित्र कार्ड चुनो?"

सभी क्रम से शब्द चित्र कार्ड चुनने आए। कुछ बच्चों को मेंढक और बगुले के चित्र वाला कार्ड नहीं मिला। वे कहने लगे, "सर, इसमें मेंढक और बगुले का कार्ड नहीं है।" तब मैंने श्यामपट पर मेंढक और बगुले का चित्र बना दिया। बच्चों ने पूछा कि इस कार्ड का क्या करें? "मेंढक और ... का चित्र बनाओ, शब्द लिखो और ... दिखाओ। और सुनी हुई कहानी का चित्र भी बनाकर दिखाओ?" मैंने कहा।

इसके बाद सभी बच्चे चित्र बनाने और शब्द लिखने में जुट गए। कुछ देर बाद बच्चों ने चित्र दिखाए। (इन्हीं में से कुछ चित्र नीचे छपे हैं।)

चित्र बनाए हैं — संतोष, रेखा, क्षमा, भीम, मुकेश और अनिल ने।

यह सब क्यों किया मैंने

बच्चों ने निम्न क्षमताओं का अभ्यास किया: सुनना, समझना, जिज्ञासा, अपनी बात कह सकना, मित्रों के साथ बातचीत करना, शब्द चित्र कार्ड का उपयोग कैसे करें, शब्द पहचान कर चित्र छांटना, दो चित्रों में संबंध, अन्तर, समानता, शब्द भण्डार में वृद्धि, चित्र बनाना, हाथ एवं उंगलियों के कौशल, कौन, कहां और क्या के प्रश्नों के उत्तर दे सकना, चित्रों की सहायता से गिनना और कितने की अवधारणा आदि।

मुझे क्या मालूम हुआ: एक तो यह कि बच्चे किस स्तर पर हैं। और दूसरा कि किस बच्चे को कौन-सी क्षमता अर्जित करवाने के लिए और अभ्यास की ज़रूरत है और अधिकांश बच्चों ने कौन-कौन सी क्षमता अर्जित कर ली है।

निष्कर्ष: बच्चों को तरह-तरह की कहानियां सुनाकर कल्पना करने, तर्क करने आदि के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

उद्देश्य: इस पूरी गतिविधि के दो उद्देश्य थे – किसी चीज़ (चित्रों आदि) को देखकर उसके बारे में सुनकर समझना व भाषा, पर्यावरण, गणित और कला की समझ विकसित करना।

शिक्षकों के लिए उपयोगी सामग्री:

– किताब: सचित्र कहानियां, प्रकाशक: प्रगति प्रकाशन, मॉस्को।

– किताब: खुशी-खुशी कक्षा-1 (हरदा और शाहपुर ब्लॉक की शालाओं में चल रही है।)

– भारती, सीखना-सिखाना पैकेज के तहत 16 ज़िलों में कक्षा-1 के लिए 1996 में नई पुस्तक शुरू हुई है।

कुछ अन्य उपयोगी किताबें:

– किताब: *बच्चे की भाषा और अध्यापक,* प्रकाशक: यूनिसेफ, लेखक: कृष्ण कुमार

– *गिजुभाई द्वारा लिखी किताबें*

– किताब: *बाल हृदय की गहराइयां,* लेखक: *गिजुभाई*

– किताब: बच्चे असफल कैसे होते हैं, लेखक: जॉन होल्ट, प्रकाशक: एकलव्य

लक्ष्मी नारायण चौधरी: होशंगाबाद ज़िले की हरदा तहसील की हरदा खुर्द प्राथमिक शाला में शिक्षक।

नया बनता समुद्र और खिसकते महाद्वीप

आमोद कारखानिस

हिमालय, आल्प्स जैसी पर्वत श्रृंखलाएं, हज़ारों किलोमीटर दूर स्थित महाद्वीपों पर एक से मिलते जीव जंतु, समुद्र तल का नया होना और उसके ऊपर मौजूद महाद्वीपों की चट्टानों का कमोबेश पुराना होना? अजीब गुत्थी थी। जब सुलझना शुरू हुई तो समझ में आया कि कैसे खिसकते हैं महाद्वीप? साथ ही एक नए विषय का जन्म भी हुआ – 'प्लेट टेक्टोनिक्स'।

मेरे घर की दीवार पर दुनिया का एक बड़ा नक्शा टंगा हुआ है। जब भी मैं उसे ध्यान से देखता हूं सभी महाद्वीप एक जिग़-सॉ पहेली* के टुकड़े लगते हैं। जब थोड़ा बहुत भू विज्ञान पढ़ा तो मालूम पड़ा कि ये सिर्फ पहेली नहीं है बल्कि यथार्थ है। ये सारे टुकड़े करोड़ों साल पहले आपस में मिलकर एक बड़ा महाद्वीप बनाते थे। बाद में धरती के अंदर चली किसी प्रक्रिया की वजह से ये महाद्वीप कई हिस्सों में बंट गया। फिर ये टुकड़े यहां-वहां घूमते हुए उस स्थिति में पहुंचे जहां कि आज दिखाई देते हैं।

लेकिन ये तो अभी हाल ही की बात है, यही कोई तीसेक बरस पहले की, जब वैज्ञानिकों ने स्वीकारा कि सारी धरती कभी एक महाद्वीप थी।

* एक ऐसी पहेली जिसमें दुनिया के नक्शे के टुकड़े कर दिए जाते हैं और फिर उन्हें जोड़ने को कहा जाता है।

दुनिया का नक्शा: दक्षिणी अमेरिका और अफ्रीका के तटों को देखकर ऐसा लगता है मानो ये एक ही ज़मीन के हिस्से हों जिन्हें तोड़कर अलग कर दिया गया हो। क्या यह सिर्फ एक संयोग है?

वरना पहले भी कई लोग यह बात कह चुके थे, कई सबूत भी इस ओर इशारा कर रहे थे; लेकिन उस समय तो उन्हें सिर्फ कल्पना कह कर हवा में उड़ा दिया जाता था।

इस समय एक वैज्ञानिक की टिप्पणी याद आ रही है जिसने कहा था कि "साठ-सत्तर के दशक में अगर आप महाद्वीपों के खिसकने में विश्वास करते होते तो अमेरिकी विश्वविद्यालयों में नौकरी पाना लगभग नामुमकिन था और अगर आज आप इस पर विश्वास नहीं करते हैं तो नौकरी पाना नामुमकिन है।"

वैसे देखें तो विज्ञान की प्रक्रिया भी कुछ ऐसी है। पहले वैज्ञानिक कुछ अवलोकनों के आधार पर एक परिकल्पना बनाते हैं। फिर अगर परिकल्पना में कुछ दम नज़र आया तो दुनिया भर के वैज्ञानिक इस परिकल्पना के आधार पर अपने अवलोकनों को समझने की कोशिश करते हैं। अगर उचित स्पष्टीकरण हुआ तो ठीक, वह परिकल्पना बनी रहती है – जब तक कि वो लोगों के अवलोकनों से मेल खाती है। नहीं तो परिकल्पना इतिहास के पन्नों में गुम हो जाती है, यह कहते हुए कि फलां विषय को समझने के लिए इंसान ने क्या-क्या परिकल्पनाएं की थीं।

तट, पहाड़ और जीवाश्म

एक पहेली थी हिमालय, आल्प्स आदि पर्वत शृंखलाओं को लेकर। ये पहाड़ी शृंखलाएं एक दूसरे के ऊपर मुंड़ी, टूटी, बेइंतहा दाब से बनी परतदार तलछटी (Sedimentary) चट्टानों से बने हैं। लोग यह तो जानते थे कि इन चट्टानों का निर्माण पानी के नीचे हुआ है, लेकिन क्या कारण रहा होगा जो ये चट्टानें पांनी के ऊपर उठ गईं — पहाड़ी शृंखलाओं के रूप में, यह गुत्थी बना हुआ था?

इसी तरह अटलांटिक क्षेत्र का नक्शा तैयार होने के बाद से लोगों का ध्यान लगातार इस ओर जाता रहा है कि अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका के समुद्र तट एक दूसरे से बेहद मिलते जुलते हैं — ऐसे लगता है कि अगर उन्हें उठा कर पास-पास कर दिया जाए तो जुड़ कर एक हो जाएंगे। जब गहराई से जांच पड़ताल की गई तो दोनों महाद्वीपों के तटीय किनारों की चट्टानों की संरचना, उम्र आदि में बेहद समानताएं मिलीं। क्या यह सिर्फ एक संयोग है?

उन्नीसवीं शताब्दी का दौर था जब प्रकृति विज्ञानी दुनिया भर की प्राकृतिक विविधता के बारे में जानकारी इकट्ठा करने के लिए लंबी-लंबी यात्राएं कर रहे थे। ऐसी ही यात्राओं के दौरान उन्हें एक ही जाति के सांप, कछुए आदि जीव अफ्रीका के साथ दक्षिण अमेरिका में भी मिले। साथ ही ग्लोसोपेटरिस जाति के फर्न (एक तरह का पौधा) के जीवाश्म भारत में तो मिले ही, ऑस्ट्रेलिया में भी खोज निकाले गए। अब ये समानताएं भी उसी संयोग की कड़ी मान ली जाएं? अगर नहीं तो सवाल खड़ा होता है कि एक दूसरे से हज़ारों किलोमीटर दूर स्थित महाद्वीपों पर कैसे पहुंच गए ये जीव?

सिकुड़ती धरती, टूटते पुल

एक सुझाव आया कि हो सकता है कि कभी ये महाद्वीप आपस में ज़मीनी पुल जैसी किसी चीज़ से जुड़े हों, जो बाद में समुद्र में डूब गई हो। ये दौर था जब पृथ्वी के ठंडा होकर सिकुड़ने की थ्योरी प्रचलित थी। तो भू-विज्ञानियों ने माना कि हो सकता है कि पृथ्वी के सिकुड़ने के कारण ये पुलनुमा चीज़ टूटकर बिखर गई हो।

इस 'धरती की सिकुड़न' वाली थ्योरी के जनक थे एक अमेरिकी भू-वैज्ञानिक जेम्स डाना। इनके अनुसार पृथ्वी कभी अर्ध पिघली अवस्था में थी, जब यह ठंडी हुई तो सिकुड़ी। उनका कहना था कि पहाड़ दरअसल कुछ और नहीं बल्कि सिकुड़न की वजह से बने हैं। जब कोई चीज़ सिकुड़ती है तो सलवटें पूरी सतह पर समान रूप से पड़ती हैं। तो धरती के मामले में ये

माउंट एवरेस्ट: हिमालय पर्वत शृंखला का सबसे ऊंचा शिखर। ये पहाड़ी शृंखला परतदार तलछटी चट्टानों से बनी हैं। बेइंतहा दाब की वजह से ये चट्टानें मुड़-तुड़ गई हैं। दुनिया के कई हिस्सों में इस तरह की पहाड़ी शृंखलाएं मिलती हैं जैसे कि आल्प्स (इनसेट में आल्प्स की एक पहाड़ी, जिसमें मुड़ी, तुड़ी परतदार चट्टानें दिख रही हैं)। तलछटी चट्टानें पानी के नीचे बनती हैं। लंबे समय तक यह बात पहेली बनी रही कि क्या वजह हो सकती है कि ये चट्टानें पानी के ऊपर उठ कर इन पहाड़ियों की शक्ल में बदल गईं?

सिर्फ कुछ ही जगह क्यों पड़ीं, पहाड़ों के रूप में?

बाद के सालों में जब चट्टानों के बनने की प्रक्रिया का व्यापक अध्ययन हुआ तो भू-वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि इन पहाड़ों के बनने से पहले इन जगहों पर उथले समुद्र का तल धीरे-धीरे नीचे धंस रहा था और उस पर तलछट की परत तेज़ी से जम रही थी। इस तरह पर्वत शृंखलाओं के रूप में ऊपर उठने से पहले ये चट्टानें काफी मोटी हो चुकी थीं।

इसी बीच एक और जानकारी सामने आई कि तलछट तो अधिकतर समुद्र की तली में जमा होता है और समुद्र महाद्वीपों के किनारे पर होते हैं – इसलिए यह जगह जहां पहाड़ी शृंखलाएं हैं कभी महाद्वीपों का किनारा रही होगी। लेकिन उलझन वहीं की वहीं थी कि समुद्र का तल धंस क्यों रहा था और चट्टानें ऊपर क्यों और कैसे उठीं?

क्या महाद्वीप खिसके हैं?

कुल मिलाकर एक पहेली-सी बनी हुई थी लेकिन कुछ वैज्ञानिकों को लग रहा था कि जीव, जीवाश्म, चट्टानों आदि की समानताएं इशारा करती हैं कि कभी ये महाद्वीप जुड़े हुए थे। उस दौर में ये जीव उस ज़मीन पर घूमा करते होंगे। बाद के दौर में किसी वजह से ये महाद्वीप अलग हो गए या टूट गए। और खिसकते हुए वहां पहुंच गए जहां कि नक्शे में आज दिखाई देते हैं। पहाड़ी शृंखलाओं को लेकर उनका कहना था कि ये महाद्वीपों की टकराहट का परिणाम हैं। जब दो महाद्वीप भिड़ेंगे तो उनके बीच आने वाले समुद्र की तलछटी चट्टानें बीच में फंसकर ऊपर की ओर उठेंगी।

जर्मनी का अल्फ्रेड वेगनर ऐसा ही एक वैज्ञानिक था। यह सिद्ध करने के लिए वह विभिन्न महाद्वीपों के बीच कई तुलनात्मक अध्ययन भी कर रहा था। आर्कटिक क्षेत्र के एक द्वीप में उसे उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मिलने वाले एक पौधे (फर्न) के जीवाश्म मिले। ठंडे आर्कटिक में ये कहां से आए? वेगनर का कहना था कि कभी यह द्वीप उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में स्थित होगा और खिसकते-खिसकते आर्कटिक क्षेत्र में पहुच गया। लेकिन 1920 के आस-पास जब वेगनर अपने तर्कों को बता रहा था, उसकी बात सुनने को कोई भी तैयार नहीं था; उन्हें सिर्फ कोरी बकवास कहा जा रहा था।

शायद दिक्कतें दो थीं। एक तो लोगों के दिलो-दिमाग पर इस बात का छाया होना कि धरती हमेशा से वैसी है जैसी कि अभी दिखती है; और दूसरी – समझ नहीं आना कि इतने विशाल और भारी महाद्वीप कैसे खिसकेंगे। यानी विज्ञान को और सबूतों की ज़रूरत थी।

चुंबकीय पृथ्वी के पलटते ध्रुव

पृथ्वी के चुंबकीय गुण के बारे में तो हमें मालूम है। मजेदार बात है कि पृथ्वी के चुंबकीय उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव हमेशा स्थिर नहीं रहते बल्कि यह स्थिति उलटती-पलटती रहती है। यानी आज जहां चुंबकीय उत्तरी ध्रुव है वहां चुंबकीय दक्षिणी ध्रुव होगा और जहां चुंबकीय दक्षिणी ध्रुव है वहां चुंबकीय उत्तरी ध्रुव होगा। यह बात तब मालूम पड़ी जब चट्टानों के चुंबकीय गुण के बारे में मालूम पड़ा और इस दिशा में अध्ययन शुरू हुए।

अगर हम कम्पास को हवा में लटकाएं तो उसकी चुंबकीय सुई पृथ्वी के चुंबकीय ध्रुवों के सापेक्ष स्थिर हो जाती है – यानी उसका उत्तरी ध्रुव पृथ्वी के चुंबकीय दक्षिणी ध्रुव की ओर और दक्षिणी ध्रुव चुंबकीय उत्तरी ध्रुव की ओर हो जाता है। इसी तरह जब चट्टान का निर्माण होता है तो चुंबकीय लौह कण अपने आप को (चट्टान की पिघली हुई अवस्था में) पृथ्वी के चुंबकीय ध्रुवों के अनुरूप जमा लेते हैं। इसी बीच अगर पृथ्वी के चुंबकीय ध्रुव पलट गए तो चट्टान की जो अगली परत बनेगी उसमें चुंबकीय कण अपने आपको पृथ्वी के चुंबकीय ध्रुवों की नई दिशा के अनुसार जमाएंगे। यह दिशा पहले निर्मित हुई परत पर जमे चुंबकीय कणों की दिशा से बिल्कुल

चुंबकीय पृथ्वी के पलटते ध्रुव: चट्टानों के अध्ययन के आधार पर वैज्ञानिकों के पास आज लाखों साल पहले की जानकारी मौजूद है – जब जब पृथ्वी के ध्रुव पलटे हों। इसे देखकर लगता है कि एक क्रम है जिसमें आज जहां दक्षिण ध्रुव है वहां उत्तरी ध्रुव हो जाएगा और जहां उत्तरी ध्रुव है वहां दक्षिण ध्रुव हो जाएगा। कई बार यह पलटन बहुत थोड़े समय के लिए होती है। ऐसी ही एक थोड़े समय वाली पलटन 30 हजार साल पहले हुई थी। इसकी कोई स्पष्ट व्याख्या नहीं है कि ये ध्रुव क्यों पलटते हैं। यहां दिए गए स्केल में 45 लाख साल पहले तक की स्थिति दिखाई गई है। महाद्वीपों के अपने मूल स्थान से खिसकने की परिकल्पना को स्थापित करने में इस चुंबकीय पलटन का महत्वपूर्ण योगदान है।

पहले की स्थितियां (लाख सालों में) — 45 40 35 30 25 20 15 10 5 — वर्तमान स्थिति
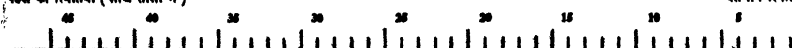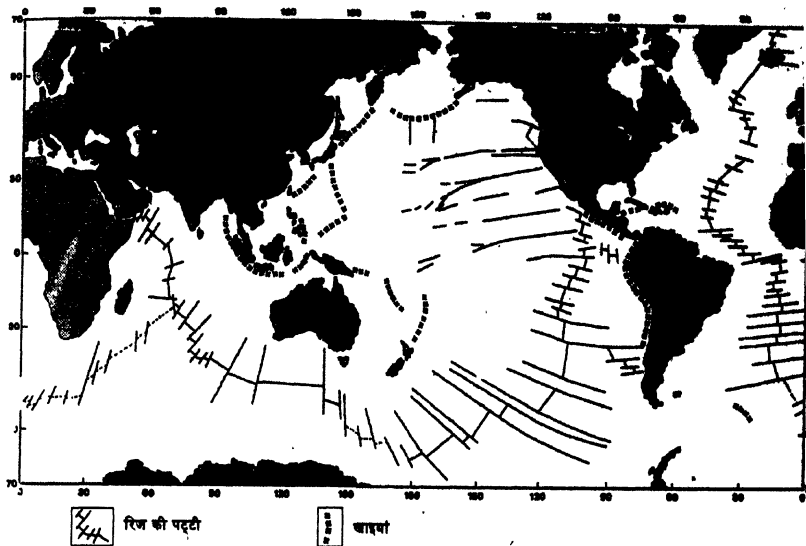
कहां-कहां हैं खाइयां और रिज: सभी महासागरों में फैली समुद्री रिजें आपस में जुड़ी हुई हैं। और खाइयां महाद्वीपों के किनारों पर हैं।

तलछट है उसकी परत तुलनात्मक रूप से काफी पतली है। इसी तरह महासागर का तल जिन चट्टानों का बना हुआ है वो भी काफी नई थीं। उन्हें समुद्र-तल में कोई भी चट्टान ऐसी नहीं मिली जिसकी उम्र पन्द्रह करोड़ साल से अधिक हो। एक इंसानी ज़िंदगी की तुलना में तो ये संख्या काफी बड़ी दिखती है लेकिन पृथ्वी की उम्र की तुलना में तो यह संख्या बहुत बड़ी नहीं लगती। कुछ अजीब-सी बात लगती है न – नीचे समुद्र तल नया और ऊपर मौजूद महाद्वीप उससे भी हज़ारों करोड़ साल पुराने।

समुद्र तल और चुंबकीय पट्टियां

समुद्री पहाड़ी शृंखला, उनमें दरारें, खाइयां, नया तल – क्या ये सारी बातें किसी एक खांचे में फिट बैठ सकती हैं? कुछ लोग इस दिशा में सोच रहे थे। 1960 में अमेरिका के प्रिंसटन विश्वविद्यालय के भूविज्ञानी हैरी एच. हैस ने समुद्र की तली के लगातार नया बनते रहने के बारे में एक परिकल्पना दी।

उन्होंने कहा कि धरती के भीतर से पदार्थ लगातार ऊपर आकर समुद्री रिज में जमता रहता है। इस तरह

समुद्री रिज में लगातार नया तल बनता रहता है। जिस गति से नए तल का निर्माण होता है, पुराना तल समुद्री खाइयों में समाकर नष्ट होता रहता है। लोग इस परिकल्पना को जांचने के बारे में सोचते इससे पहले ही एक नई समस्या उठ खड़ी हुई।

जब समुद्र विज्ञानियों ने बड़े-बड़े चुंबकत्वमापी समुद्र तल में उतारे तो तली का व्यवहार बड़ा अजीब था। ऐसा लगता था मानों समुद्र तल बड़ी-बड़ी पट्टियों में बंटा हो। हर पट्टी पर जमी चुंबकीय कणों की दिशा बगल वाली पट्टी से बिल्कुल उलट थी (देखिए चित्र)। धीरे-धीरे दुनिया के सभी महासागरों में भी ऐसे ही पैटर्न में जमी हुई पट्टियां खोज निकाली गईं। एक ओर हैरी एच. हैस की समुद्र तल के लगातार नए बनते रहने की परिकल्पना और इधर ये चुंबकीय पट्टियां। कुछ साल यूं ही निकल गए।

इसी बीच 1963 में कैंब्रिज विश्वविद्यालय के दो शोधार्थियों फ्रेड वाइन और डी. एच. मैथ्यूज़ ने अपना एक पर्चा प्रकाशित किया। इसमें उन्होंने हिंद महासागर में मिली चुंबकीय पट्टियों का विश्लेषण किया था।

उन्होंने कहा कि जब समुद्री पहाड़ियों में मौजूद दरार में नीचे से आया हुआ पदार्थ जमेगा तो उसमें मौजूद चुंबकीय कण अपने आपको पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र की दिशा के अनुरूप जमा लेंगे। अगर समुद्री रिज में पदार्थ लगातार ऊपर आता रहता है तो धीरे-धीरे ये पट्टी चौड़ी होती जाएगी। इसी बीच अगर पृथ्वी के चुंबकीय ध्रुव पलट गए तो अब जो नया पदार्थ आएगा उसके चुंबकीय कण अपने आपको इस नई स्थिति के अनुरूप जमाएंगे। यह पट्टी पहली वाली पट्टी के मुकाबले उल्टी दिशा में चुंबकीय गुण दिखाएगी।

इस विश्लेषण का सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु था कि अगर समुद्री रिज से निकलता पदार्थ रिज के दोनों तरफ समान रूप से फैलता है तो दोनों तरफ एक-सी समानांतर चुंबकीय पट्टियों का पैटर्न मिलेगा। और एक ही काल में बनी पट्टियां रिज से समान दूरी पर दोनों ओर मिलेंगी।

यह थ्योरी काफी आकर्षक थी। इसे जांचने के लिए महासागर के तलों की तेज़ी से जांच पड़ताल शुरू हो गई। हर बार परिणाम वही आए जैसे कि वैन और मैथ्यूज़ ने अपनी परिकल्पना के आधार पर भविष्यवाणी की थी।

वैज्ञानिकों ने रिज से दूर जाती पट्टियों के ऊपर जमे तलछट की सबसे निचली परत से जीवाश्म निकाले और तली की चट्टानों के नमूने लिए। उन्होंने पाया कि रिज से दूर जाती हर परत पहले वाली के मुकाबले पुरानी थी।

अब सब-कुछ साफ था। समुद्र तल अपने बनने का इतिहास खुद सुना रहा था। हैस की थ्योरी इस जांच पड़ताल में खरी पाई गई। चूंकि नया तल रिज के समानान्तर बनता है इसलिए इन चुंबकीय पट्टियों के आधार पर यह जानना आसान हो गया कि विभिन्न महासागरों के फैलने (नया तल बनने) की गति और दिशा क्या है। इसी के साथ यह गुत्थी भी सुलझ गई कि महाद्वीप किस प्रकार खिसकते होंगे।

इस तरह सत्तर और अस्सी के दशक में एक नए विषय का जन्म हुआ जिसे 'प्लेट टेक्टोनिक्स' कहते हैं। इसके दो भाग हैं – 'महासागर के तल का फैलना' और 'महाद्वीपों का गतिमान होना'।

प्लेटों में बंटी पृथ्वी

गोल पृथ्वी को मोटे तौर पर तीन भागों में बांट सकते हैं। ऊपर का कड़ा खोल या आवरण – अखरोट की तरह; बीच का पिघला हिस्सा – जिसे मेन्टल कहते हैं; और केंद्र का ठोस हिस्सा – कोर। मेन्टल का ऊपरी हिस्सा अर्ध पिघली अवस्था में है। इसी तरह कोर का ऊपरी हिस्सा भी पिघली अवस्था में है। खैर हमें यहां अर्ध पिघले मेन्टल और कड़े आवरण से मतलब है।

महासागरों में चुंबकीय पट्टियां: जब दरार को भरने के लिए धरती के नीचे से पदार्थ आकर जमता है तो उसमें मौजूद चुंबकीय कण अपने आपको पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र के अनुरूप जमाते हैं। चूंकि प्लेटों के खिसकने, दरार के फैलने और नीचे से पदार्थ के आकर जमने की प्रक्रिया लगातार चलती रहती है इसलिए एक ही दिशा में जमे चुंबकीय कणों की एक पट्टी-सी बन जाती है। इसी बीच अगर पृथ्वी के चुंबकीय ध्रुव पलट गए तो अब जो नया पदार्थ बाहर आकर दरार में जमेगा उसमें चुंबकीय कण अपने आपको पृथ्वी की नई चुंबकीय दिशा के अनुरूप जमाएंगे। यह दिशा पहले वाली दिशा के बिल्कुल उलट होगी। अगर तल रिज के दोनों ओर समान रूप से फैल रहा है तो दोनों ओर एक से पैटर्न की समानान्तर पट्टियां मिलेंगी। इनसे यह जानने में मदद मिलती है कि रिज से तलों के फैलने (नया बनने) की दिशा क्या रही होगी। साथ ही अलग-अलग काल में बनी पट्टियों की चौड़ाई के आधार पर विभिन्न महासागरों के तलों के फैलने की गति की तुलना की जा सकती है। तीर की दिशा पट्टियों के रिज से दूर खिसकते जाने की दिशा बता रही है।
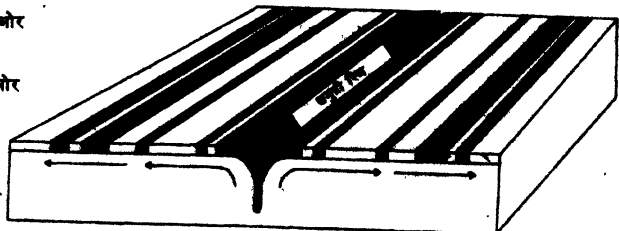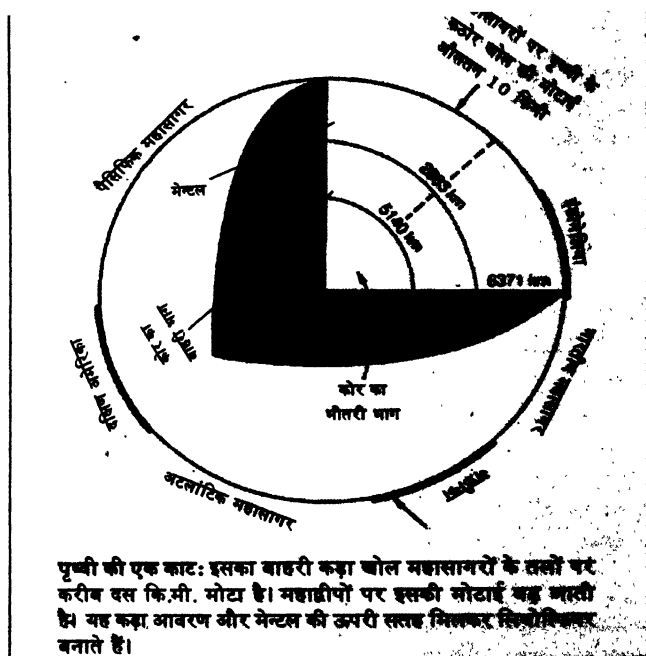
पृथ्वी की एक काट: इसका बाहरी कड़ा खोल महासागरों के तलों पर करीब दस कि.मी. मोटा है। महाद्वीपों पर इसकी मोटाई बढ़ जाती है। यह कड़ा आवरण और मेन्टल की ऊपरी सतह मिलकर लिथोस्फियर बनाते हैं।

इन दोनों की मोटाई करीब चालीस मील है। इसे लिथोस्फियर कहते हैं। यह कई जगह से चटका हुआ है। ये दरारें समुद्री रिज और खाइयों के रूप में हैं। इस तरह कह सकते हैं कि ग्लोब कई प्लेटों से मिलकर बना हुआ है। इन प्लेटों की सीमाएं हैं दरारें यानी समुद्री रिज और खाइयां।

प्लेट और महाद्वीप

महाद्वीप इन्हीं प्लेटों पर धंसे हुए हैं। इनका कोई अलग अस्तित्व नहीं है।

कई प्लेटें इतनी बड़ी हैं कि महाद्वीपों के साथ-साथ महासागरों के तल का एक बड़ा हिस्सा भी उनके साथ होता है। जैसे कि भारतीय प्लेट – जिस पर भारत भी सवार है और भारतीय महासागर (Indian Ocean) के तल का एक बड़ा हिस्सा भी इससे बना हुआ है।

अगर भारतीय महासागर को ही देखें, इसका तल मोटे तौर पर तीन प्लेटों से बना हुआ है। भारतीय प्लेट – जिस पर भारत सवार है, अफ्रीकन प्लेट – जिस पर अफ्रीका सवार है और अंटार्कटिक प्लेट (चित्र देखें)।

कल्पना कीजिए कि अगर ग्लोब से

A अरब **P** फिलीपींस **C** कैरिबियन

प्लेट: धरती की सतह मोटे तौर पर छह बड़ी और कुछ छोटी प्लेटों में बंटी है। इन प्लेटों पर ही महाद्वीप सवार होते हैं। कई प्लेटें इतनी बड़ी हैं कि महाद्वीप तो इन पर होते ही हैं, महासागरों के तल का एक बड़ा हिस्सा भी इनसे बना होता है। जैसे कि भारतीय प्लेट। नक्शे में तीर के निशान प्लेट के गति करने की दिशा को दिखा रहे हैं।

पानी निकाल दिया जाए तो खाली ग्लोब कैसा लगेगा। उठे हुए हिस्से महाद्वीप होंगे और महासागरों के तल में जहां प्लेटों की सीमाएं हैं वहां समुद्री पहाड़ियों की शृंखलाएं होंगी और कुछ जगहों पर (महाद्वीपों के किनारों) महासागरों के तल में गहरी-गहरी खाइयां।

कैसे चलती है प्लेट

खिसकती प्लेट हैं इसलिए इनके साथ इन पर सवार महाद्वीपों को भी चलना पड़ता है। जब कभी पृथ्वी के भीतर चल रही हलचलों के कारण प्लेट को खिसकना पड़ता है तो दो प्लेटों के बीच मौजूद दरार चौड़ी होती है। चूंकि दो प्लेटों के बीच बिल्कुल भी खाली जगह नहीं रह सकती इसलिए धरती के भीतरी भाग से पिघला पदार्थ तुरंत ऊपर आकर इस खाली जगह को भर देता है। इस तरह नया तल बनता जाता है और प्लेट खिसकती जाती है। समुद्र के भीतर मौजूद रिज में भी यही स्थिति होती है।

अगर नया तल बन रहा है तो वह जगह घेरेगा – क्या इसका मतलब है

पृथ्वी की एक काट: इसका बाहरी कड़ा खोल महासागरों के तलों पर करीब दस कि.मी. मोटा है। महाद्वीपों पर इसकी मोटाई बढ़ जाती है। यह कड़ा आवरण और मेन्टल की ऊपरी सतह मिलकर लिथोस्फियर बनाते हैं।

इन दोनों की मोटाई करीब चालीस मील है। इसे लिथोस्फियर कहते हैं। यह कई जगह से चटका हुआ है। ये दरारें समुद्री रिज और खाइयों के रूप में हैं। इस तरह कह सकते हैं कि ग्लोब कई प्लेटों से मिलकर बना हुआ है। इन प्लेटों की सीमाएं हैं दरारें यानी समुद्री रिज और खाइयां।

प्लेट और महाद्वीप

महाद्वीप इन्हीं प्लेटों पर धंसे हैं। इनका कोई अलग अस्तित्व नहीं

कई प्लेटें इतनी बड़ी हैं कि महाद्वीपों के साथ-साथ महासागरों के तल का एक बड़ा हिस्सा भी उनके साथ होता है। जैसे कि भारतीय प्लेट – जिस पर भारत भी सवार है और भारतीय महासागर (Indian Ocean) के तल का एक बड़ा हिस्सा भी इससे बना हुआ है।

अगर भारतीय महासागर को ही देखें, इसका तल मोटे तौर पर तीन प्लेटों से बना हुआ है। भारतीय प्लेट – जिस पर भारत सवार है, अफ्रीकन प्लेट – जिस पर अफ्रीका सवार है और अंटार्कटिक प्लेट (चित्र देखें)।

कल्पना कीजिए कि अगर ग्लोब से

A अरब **P** फिलीपींस **C** कैरिबियन

प्लेट: धरती की सतह मोटे तौर पर छह बड़ी और कुछ छोटी प्लेटों में बंटी है। इन प्लेटों पर ही महाद्वीप सवार होते हैं। कई प्लेटें इतनी बड़ी हैं कि महाद्वीप तो इन पर होते ही हैं, महासागरों के तल का एक बड़ा हिस्सा भी इनसे बना होता है। जैसे कि भारतीय प्लेट। नक्शे में तीर के निशान प्लेट के गति करने की दिशा को दिखा रहे हैं।

पानी निकाल दिया जाए तो खाली ग्लोब कैसा लगेगा। उठे हुए हिस्से महाद्वीप होंगे और महासागरों के तल में जहां प्लेटों की सीमाएं हैं वहां समुद्री पहाड़ियों की शृंखलाएं होंगी और कुछ जगहों पर (महाद्वीपों के किनारों) महासागरों के तल में गहरी-गहरी खाइयां।

कैसे चलती है प्लेट

खिसकती प्लेट हैं इसलिए इनके साथ इन पर सवार महाद्वीपों को भी चलना पड़ता है। जब कभी पृथ्वी के भीतर चल रही हलचलों के कारण प्लेट को खिसकना पड़ता है तो दो प्लेटों के बीच मौजूद दरार चौड़ी होती है। चूंकि दो प्लेटों के बीच बिल्कुल भी खाली जगह नहीं रह सकती इसलिए धरती के भीतरी भाग से पिघला पदार्थ तुरंत ऊपर आकर इस खाली जगह को भर देता है। इस तरह नया तल बनता जाता है और प्लेट खिसकती जाती है। समुद्र के भीतर मौजूद रिज में भी यही स्थिति होती है।

अगर नया तल बन रहा है तो वह जगह घेरेगा — क्या इसका मतलब है

नया बनता तल (एक रेखाचित्र): रिज से बाहर आते पदार्थ से बनता नया तल। नए तल को जगह देने के लिए पुराने तल का हिस्सा खाई में समा जाता है। जहां से होकर ये मेन्टल में पहुंचता है। इस तरह नए तल के बनने और पुराने के खत्म होने की प्रक्रिया चलती रहती है। तीर गति की दिशा दिखा रहे हैं।

कि धरती लगातार फूलती जा रही है? गणना की गई है कि पिछले 60 करोड़ सालों में धरती के आकार में लगभग नहीं के बराबर वृद्धि हुई है। इसका मतलब है कि अगर कहीं तल बन रहा है तो उसी गति से कहीं और नष्ट भी हो रहा है। बिल्कुल यही होता है महासागर के किनारों पर मिलने वाली समुद्री खाइयों में।

जब भी प्लेट खिसक कर किसी दूसरी प्लेट से टकराती है तो एक प्लेट नीचे की ओर झुककर पृथ्वी के भीतर समा जाती है। इन जगहों पर बहुत गहरी खाइयां बन जाती हैं। आमतौर पर यह जगह समुद्र के भीतर महाद्वीपों के किनारों पर होती है। यह खाइयां बहुत गहरी होती हैं।

महाद्वीप कैसे बच गए?

अगर प्लेट नष्ट हो रही है तो महाद्वीपों का क्या होता है?

दरअसल प्लेट का निर्माण जिन चट्टानों से होता है उनका घनत्व बहुत अधिक होता है। जबकि महाद्वीपों की चट्टानें इनके मुकाबले काफी हल्की हैं इसीलिए वे इनके साथ धरती के भीतर डूब नहीं पातीं। इसीलिए जब दो प्लेटों पर सवारी करते महाद्वीप टकराते हैं तो कोई एक प्लेट तो झुककर नीचे चली जाती है लेकिन महाद्वीपों का पदार्थ ऊपर की ओर उठकर पर्वत शृंखलाएं बना लेता है।

चूंकि प्लेट के बनने और बिगड़ने की प्रक्रिया में महाद्वीपीय पदार्थ नष्ट नहीं होता इसीलिए समुद्र तलों के मुकाबल महाद्वीप बहुत अधिक पुराने हैं। और उन पर समुद्र तलों के मुकाबले करोड़ों साल पहले की चट्टानें मिलती हैं।

हमने बात शुरू की थी महाद्वीपों के एक होने से और कहां चले आए। लेकिन सही भी था न कि जब तक प्लेटों के चलने का तरीका समझ नहीं आता, कैसे समझते कि कभी महाद्वीप

भी खिसके होंगे। अब इनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व तो है नहीं, बस प्लेट के साथ चलते रहते हैं।

सच, कितना मुश्किल है न यह अहसास कर पाना कि हमारे नीचे की दुनिया हमेशा गतिमान है। अलग-अलग महासागरों में विभिन्न प्लेटों के बनने की दर एक सेंटीमीटर से लेकर 20 सेंटीमीटर तक नापी गई है। लेकिन भूविज्ञान में यह गति भी बहुत तेज़ मानी जाती है।

इस रफ्तार से 10 करोड़ सालों में तो एक पूरा-का-पूरा समुद्र नया बन सकता है। और देखो न इसी गति ने हमें कहां से कहां पहुंचा दिया। कभी भारत नीचे अंटार्कटिका क्षेत्र में पड़ा हुआ था और आज भूमध्य रेखा के ऊपर है। खैर — एक बार प्लेटों के चलने का तरीका समझ में आने के बाद महाद्वीपों के खिसकने में जो गफलत थी वो दूर हो गई।

कुछ अधूरे सवाल

अलग-अलग महासागरों के फैलनें की गति, दिशा, चट्टानों के अध्ययन आदि की मदद से अनुमान लगाया गया है कि दुनिया के सारे महाद्वीप करीब 20 करोड़ साल पहले एक थे। कैसा था यह सुपर महाद्वीप? कहां से टूटा यह?. . . . आदि, आदि ढेरों सवाल हैं। जिनके जवाब भूविज्ञान के पास हैं। लेकिन अगली बार तक इंतज़ार करना पड़ेगा।

इसी तरह ऐसा ही एक और सवाल उठता है कि क्या प्लेटें सिर्फ टकराती हैं, नई बनती हैं और नष्ट होती हैं? या फिर प्लेटों का कोई और भी गुण है? जवाब है कि है — लेकिन यहां बताने के लिए जगह अब ज़्यादा नहीं बची है? तो इसे भी अगली बार के लिए मुल्तवी करते हैं।

हां, जाने से पहले एक बात और — कि प्लेट टेक्टोनिक्स सिर्फ समुद्र के फैलने, पहाड़ी श्रृंखलाओं के बनने की बात नहीं करती बल्कि भूकंप और ज्वालामुखी जैसी घटनाओं के जवाब भी ढूंढती है। और हां, नया बनना सिर्फ समुद्र के भीतर नहीं होता बल्कि महाद्वीपों के ऊपर भी दिखाई देता है। पूछोगे कहां, तो मैं कहूंगा रुको अगले अंक तक; जब हम फिर से निकलेंगे प्लेट टेक्टोनिक्स की यात्रा पर।

आमोद कारखानिस: कम्प्यूटर विज्ञानी; शौकिया चित्रकार; बंबई में रहते हैं।
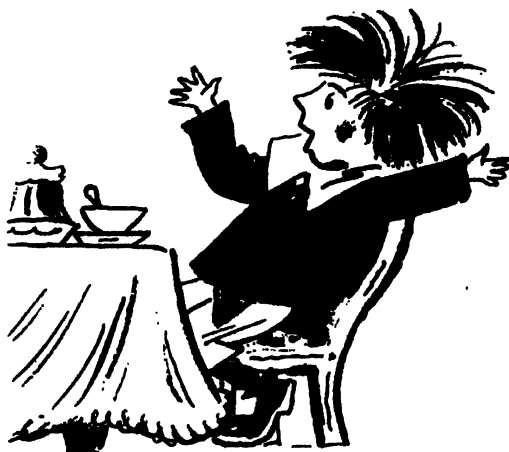
रक्त के बहाव में रुकावट

सवाल: कभी-कभी हमारे शरीर के अंग जैसे हाथ और पैर अचानक कुछ काम नहीं करते और एक प्रकार से सुन्न हो जाते हैं जिसे हम कहते हैं कि पैर में नींद आ गई, ऐसा क्यों?

जवाब: यह तो शायद तुम जानते ही हो कि हमारे शरीर के अंगों को हिलाने-डुलाने का काम मांसपेशियां करती हैं। चाहे आंख की पलक हो या पैर की अंगुली या घोड़े का कान — किसी भी जंतु का कोई भी अंग बिना मांसपेशी के नहीं हिल सकता।

किन्तु बात सिर्फ इतनी-सी नहीं है। मांसपेशियां तब तक काम नहीं कर सकतीं जब तक उन्हें लगातार रक्त न मिलता रहे और उनमें तंत्रिकाओं का जाल न बिछा हो।

खून इसलिए जरूरी है क्योंकि शरीर की प्रत्येक कोशिका अपने लिए ऊर्जा खुद पैदा करती है; और ऊर्जा पैदा करने के लिए उसे जरूरत होती है ऑक्सीजन व भोजन की। ये दोनों चीजें शरीर की प्रत्येक कोशिका तक

खून के ज़रिए पहुंचती हैं।

इसी तरह तंत्रिका तंत्र के बगैर मांसपेशियां काम नहीं कर सकतीं क्योंकि तंत्रिकाओं के द्वारा ही मांसपेशियों को संदेश मिलता है कि उन्हें सिकुड़ना है या फैलना, दाएं मुड़ना है या बाएं . . . ।

मनुष्य के शरीर की रचना से संबंधित किसी किताब में दिए हुए चित्रों में तुम देख सकते हो कि हमारे शरीर में किस प्रकार रक्त लाने, ले जाने वाली नलिकाओं और संदेश लाने, ले जाने वाली तंत्रिकाओं का जाल बिछा रहता है। मांसपेशी तभी काम कर सकती है जब उसे तंत्रिका के माध्यम से संदेश प्राप्त होता है। वैसे तंत्रिकाएं इनके अलावा एक और काम करती हैं। जब भी कोई चीज़ हमारे शरीर से छूती है अथवा हमें ठंड या गर्मी महसूस होती है — यह सब हमें तंत्रिकाओं के कारण ही पता चलता है। इसे संवेदना ग्रहण करना कहते हैं।

अगर खून का पहुंचना इतना ही ज़रूरी है तो सोचो, यदि किसी तंत्रिका को लंबे समय तक रक्त न मिले तो क्या होगा, यानी तंत्रिका की कोशिकाओं तक न तो ऑक्सीजन पहुंच पाए और न ही पोषण? ऐसी स्थिति में न तो यह तंत्रिका संदेश ले जा सकेगी और न ही संवेदना ग्रहण कर सकेगी।

तो जब हम लगातार किसी असुविधाजनक स्थिति में बैठे या लेटे रहते हैं और हमारे शरीर का कोई भाग जैसे हाथ या पैर, लंबे समय तक दबा रहता है तो उस भाग में रक्त के बहाव में रुकावट पैदा हो जाती है। इस रुकावट का नतीजा यह होता है कि उस अंग की पेशियों और तंत्रिकाओं को ऑक्सीजन और पोषण युक्त रक्त नहीं मिलता या कम मिलता है। ऐसी स्थिति में तंत्रिकाएं अपना काम ठीक से नहीं कर पातीं। जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं, यदि तंत्रिका अपना काम ठीक से न कर सके तो वह न तो बाहर से संवेदना को ग्रहण कर सकती है और न ही पेशी तक संदेश पहुंचा कर उसे हिलाडुला सकती है। इसे ही हम बोलचाल की भाषा में सुन्न हो जाना कहते हैं।

जो अंग सुन्न हो जाता है उससे कोई चीज़ छूने पर न तो उस अंग को स्पर्श का अहसास होता है और न उसे ठीक से हिलाया जा सकता है। कभी-कभी इस स्थिति में झिनझिनी भी महसूस होती है क्योंकि तंत्रिका को कम रक्त मिलने पर उसमें कुछ प्रतिक्रिया या झनझनाहट होती है जो हमें झिनझिनी के रूप में महसूस होती है। जब हम वापस सामान्य स्थिति में आ जाते हैं तब उस अंग में फिर से रक्त बहने लगता है और तंत्रिकाएं फिर से काम करना शुरू कर देती हैं। इस वक्त भी तंत्रिकाओं में तेज़ झिनझिनी महसूस होती है।

इस सवाल को पूछा था बलदेव जुमनानी, साधु वासवानी विद्या मंदिर, होशंगाबाद ने।

इस बार सवालीराम ने पूछा है सवाल पृष्ठ नं 53 पर।

खून के ज़रिए पहुंचती हैं।

इसी तरह तंत्रिका तंत्र के बगैर मांसपेशियां काम नहीं कर सकतीं क्योंकि तंत्रिकाओं के द्वारा ही मांसपेशियों को संदेश मिलता है कि उन्हें सिकुड़ना है या फैलना, दाएं मुड़ना है या बाएं . . . ।

मनुष्य के शरीर की रचना से संबंधित किसी किताब में दिए हुए चित्रों में तुम देख सकते हो कि हमारे शरीर में किस प्रकार रक्त लाने, ले जाने वाली नलिकाओं और संदेश लाने, ले जाने वाली तंत्रिकाओं का जाल बिछा रहता है। मांसपेशी तभी काम कर सकती है जब उसे तंत्रिका के माध्यम से संदेश प्राप्त होता है। वैसे तंत्रिकाएं इनके अलावा एक और काम करती हैं। जब भी कोई चीज़ हमारे शरीर से छूती है अथवा हमें ठंड या गर्मी महसूस होती है – यह सब हमें तंत्रिकाओं के कारण ही पता चलता है। इसे संवेदना ग्रहण करना कहते हैं।

अगर खून का पहुंचना इतना ही ज़रूरी है तो सोचो, यदि किसी तंत्रिका को लंबे समय तक रक्त न मिले तो क्या होगा, यानी तंत्रिका की कोशिकाओं तक न तो ऑक्सीजन पहुंच पाए और न ही पोषण? ऐसी स्थिति में न तो यह तंत्रिका संदेश ले जा सकेगी और न ही संवेदना ग्रहण कर सकेगी।

तो जब हम लगातार किसी असुविधाजनक स्थिति में बैठे या लेटे रहते हैं और हमारे शरीर का कोई भाग जैसे हाथ या पैर, लंबे समय तक दबा रहता है तो उस भाग में रक्त के बहाव में रुकावट पैदा हो जाती है। इस रुकावट का नतीजा यह होता है कि उस अंग की पेशियों और तंत्रिकाओं को ऑक्सीजन और पोषण युक्त रक्त नहीं मिलता या कम मिलता है। ऐसी स्थिति में तंत्रिकाएं अपना काम ठीक से नहीं कर पातीं। जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं, यदि तंत्रिका अपना काम ठीक से न कर सके तो वह न तो बाहर से संवेदना को ग्रहण कर सकती है और न ही पेशी तक संदेश पहुंचा कर उसे हिलाडुला सकती है। इसे ही हम बोलचाल की भाषा में सुन्न हो जाना कहते हैं।

जो अंग सुन्न हो जाता है उससे कोई चीज़ छूने पर न तो उस अंग को स्पर्श का अहसास होता है और न उसे ठीक से हिलाया जा सकता है। कभी-कभी इस स्थिति में झिनझिनी भी महसूस होती है क्योंकि तंत्रिका को कम रक्त मिलने पर उसमें कुछ प्रतिक्रिया या झनझनाहट होती है जो हमें झिनझिनी के रूप में महसूस होती है। जब हम वापस सामान्य स्थिति में आ जाते हैं तब उस अंग में फिर से रक्त बहने लगता है और तंत्रिकाएं फिर से काम करना शुरू कर देती हैं। इस वक्त भी तंत्रिकाओं में तेज़ झिनझिनी महसूस होती है।

इस सवाल को पूछा था बलदेव जुमनानी, साधु वासवाणी विद्या मंदिर, होशंगाबाद ने।

इस बार सवालीराम ने पूछा है सवाल पृष्ठ नं 53 पर।

वहां पहुंच भी जाए तो क्या तीर मार लेगा?) उसे तो कागद की लिखी जानकारी चाहिए। जितना पुराना कागद उतनी अच्छी जानकारी। जानकारी पत्थर पर खुदी हो तो और भी अच्छी। कबीर ने कागद मसी* का उपयोग नहीं किया। किया भी हो तो 600 साल में उसकी क्या हालत होती। (कुछ साल पहले पं. श्याम-सुंदरदास ने कबीर पदों की एक पांडुलिपि खोज निकाली थी; जिसमें लिखा है कि इसे संवत 1561 में पूरा किया गया। लोक परंपरा के अनुसार कबीर संवत 1575 में मरे। सो यह मान लिया गया कि यह पांडुलिपि कबीर के जीवनकाल में तैयार की गई थी। लेकिन बाद की शोध से पता चलता है कि यह तारीख प्रामाणिक नहीं है।)

कबीर ने क्या कहा?

कबीर के जीवन के बारे में ज़िक्र हमें कबीर के अपने पदों से मिल सकता है या फिर समकालीन या परवर्ती लेखकों के कथनों से। प्रामाणिक पांडुलिपि के न होने से यह कहना असंभव है कि अमुक पद कबीर के अपने हैं कि उनके नाम से प्रचलित किए गए पदों में से हैं। एक काम हम ज़रूर कर सकते हैं — कबीर के सबसे पुराने संकलन, जिनकी तारीख पता हो उन्हें अपनी शोध का आधार बना सकते हैं। और इनसे इतना बताया जा सकता है कि कबीर के सबसे पुराने संकलनों से कबीर के जीवन के बारे में क्या पता चलता है। कबीर के पदों के तीन प्रमुख संकलन हैं — गुरु ग्रंथ साहब, पंचवाणी और बीजक। इनमें से 'ग्रंथ साहब संकलन' सबसे पुराना है और बीजक संभवतः सबसे बाद का।

अगर हम उन पदों को कबीर की जीवनी का आधार बनाएं जो कम-से-कम दो संकलनों में उपलब्ध हैं, तो कबीर के जीवन पर रोशनी डालने वाले पद कुल सात के करीब हैं। इनमें कबीर अपने आप को जुलाहा कहते हैं, लेकिन कभी भी यह नहीं बताते कि वे किस धर्म से जुड़े हुए हैं। एक में कबीर कहते हैं कि उन्होंने कपड़ा बुनना छोड़ दिया और राम भजन में लग गए हैं और उन्हें राम पर पूरा भरोसा है कि वह उनका व उनके परिवार का पोषण करेगा। दो ऐसे पद हैं जिनमें काज़ी द्वारा उन्हें गंगा में डुबोने और हाथी के पांव तले रौंदने के असफल प्रयासों की चर्चा है। लगभग चार पदों में मोक्षपुरी काशी को त्यागकर शूद्रों व म्लेच्छों की बस्ती 'मगहर' में आकर बसने की बात कही गई है। ग्रंथ साहब में इनके अलावा कुछ पद हैं जिनमें

* मसि कागद छुवो नहीं। कलम गहो नहिं हाथ॥
चारिउ युग का महातम। मुखहि जनाई बात॥

कबीर वाणी के संकलन

1. सबसे पुराना और प्रामाणिक है गुरु ग्रंथ साहब में गुरु अर्जुनदेव द्वारा संकलित कबीर पद। गुरु अर्जुनदेव ने लगभग सन 1604 में नानक आदि अनेक संतों की वाणी को संकलित किया जो 'गुरु ग्रंथ साहब' नाम से प्रसिद्ध है। इसकी काफी पुरानी पांडुलिपियां मिल जाती हैं और माना गया है कि सबसे पुरानी पांडुलिपि अमृतसर के स्वर्ण मंदिर में है।
2. उसके बाद है दादु पंथियों के संकलन, पंचवाणी और सर्बांगी जो लगभग सन 1550 के बाद संकलित किए गए थे।
3. कबीर पंथियों का अपना संकलन है बीजक। विद्वानों द्वारा माना गया है कि इसमें बहुत से बाद के पदों को शामिल किया गया है। बीजक की पांडुलिपि काफी बाद की है। इन कारणों से बीजक की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लग जाता है।

पारसनाथ तिवारी और फ्रांसीसी विदुषी शारलॉट वॉडविल ने तीनों संकलनों में से प्रामाणिक साखियों व पदों को चुनने का प्रयास किया है। वॉडविल ने उन साखियों व पदों को चुना जो तीनों संकलनों में पाए जाते हैं या किन्हीं दो संकलनों में ही पाए जाते हैं; अगर साखियों को ही लें तो केवल 182 ऐसी हैं जिनका उल्लेख दो या तीन संकलनों में मिलता है। इन साखियों के बारे में हम शायद यह कह सकते हैं कि ये कबीर की रचना के निकटतम रही होंगी।

कबीर की पत्नी और बेटे कमाल का ज़िक्र है। ज़ाहिर है कि इन पदों के अनुसार कबीर शादीशुदा थे। कबीर के अपने पदों से उनके जीवन के बारे में हमें यही जानकारी मिलती है जिसे हम कुछ हद तक प्रामाणिक मान सकते हैं – *काशी या मगहर का जुलाहा होना, शादी शुदा होना, भक्ति मार्ग को अपनाना, सत्ता के दमन-चक्र का सामना करना, मगहर में मरना।*

समकालीन भक्तों का कथन

नानक कबीर का ज़िक्र नहीं करते लेकिन अन्य समकालीन या निकट समकालीन भक्त कविगणों ने उनका जगह-जगह ज़िक्र किया है।

रैदास जो संभवत: कबीर के कनिष्ठ समकालीन थे, कबीर के बारे में कुछ प्रकाश डालते हैं। ज़ाहिर है कि कबीर अपने काल में ही काफी मशहूर हो चले थे। रैदास स्पष्ट करते हैं कि कबीर

मुसलमान जुलाहों के परिवार में जन्मे थे और,

"जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ बधु करहि मानीअहि सेख सहीद पीरा।
जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी तिहू रे लोक परसिध कबीरा॥"

उनके घर में ईद-बकरीद को गाय काटी जाती थी और उनके परिवार में शेख, शहीद और पीर को माना जाता था। ऐसे परिवार में जन्मे कबीर तीनों लोक में वन्दनीय बने।

यह पद 'ग्रंथ साहब' में पाया जाता है। इस जानकारी से हम दो निष्कर्ष निकाल सकते हैं। एक यह कि उनके समकालीनों द्वारा कबीर जन्म से मुसलमान माने जाते थे और यह कि उनके परिवार के लोग हालांकि मुसलमान थे, इस्लाम धर्म से उनका जुड़ाव सिर्फ ईद-बकरीद मनाने और पीरों की मज़ारों पर दुआ मांगने तक सीमित था। तो कबीर के जीवन की एक और महत्वपूर्ण बात सामने आती है, कि *वे एक तरह से सीमांत मुसलमान परिवार के थे।*

सन 1585 के आसपास रामानंदी संप्रदाय के एक कवि-इतिहासकार हुए — नाभाजी। उन्होंने 'भक्तमाल' नामक एक काव्य की रचना की। इसमें उस दौर के भक्तों के बारे में चर्चा है। नाभाजी ने कबीर का सटीक विवरण दिया है जो उल्लेखनीय है;

"कबीर कानि राखि नहीं वर्णाश्रम षट दरस की।
भक्ति विमुख जो धर्म सो अधर्म कर्म गायो।
जोग जग्य व्रत दान भजन बिन तुच्छ दिखायो॥
हिंदू तुरक प्रमान रमैनी शब्दी साखी।
पक्षपात नहिं वचन सब ही के हित की भाखी॥
आरूढ़ दसा ह्वै जगत पर मुख देखई नाहिन भनी।
कबीर कर्म न राखी नहीं वर्णाश्रम षट दरसनी॥"

कबीर ने जातपात के भेदभावों को मानने से इनकार कर दिया; उन्होंने षडदर्शन को भी स्वीकार नहीं किया; ब्राह्मणों द्वारा विदित चार आश्रमों को भी ठुकराया; उनका मानना था कि भक्ति विहीन धर्म, अधर्म मात्र है और तमाम तपस्या, व्रत, उपवास, दान पुण्य आदि भजन बिना निरर्थक हैं, उन्होंने रमैनी, शबद, और साखियों के माध्यम से हिंदुओं व तुर्कों दोनों को उपदेश दिए; उन्होंने किसी से पक्षपात नहीं किया और सभी के लिए उपकारी उपदेश दिए; उन्होंने दृढ़ निश्चय के साथ बोला और दुनिया के लोगों को खुश करने का प्रयास नहीं किया।

यहां पर नाभाजी कबीर का जीवन वृत्तांत तो नहीं बताते हैं लेकिन उनके व्यक्तित्व और संदेश का बेजोड़ सार

पेश करते हैं। किसी और संदर्भ में नाभाजी कबीर को रामानंद के बारह शिष्यों में गिनते हैं। अन्य ग्यारह लोग या तो अज्ञात हैं या फिर अलग-अलग समय के हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि किसी खास कारण से कबीर और अन्य एकेश्वरवादी भक्तों को रामानंद से जोड़ने का प्रयास हो रहा था।

आईन-ए-अकबरी में

ग्रंथ साहब में कबीर पदों के संकलन से स्पष्ट हो जाता है कि सन 1600 तक आते आते उनके पद पूरे उत्तर भारत में गाए जाने लगे थे। कबीर तब तक इतने लोकप्रिय हो चुके थे कि मुगल शासक वर्ग भी उनके प्रभाव से अछूता न रह सका। बादशाह अकबर के विश्वासपात्र दरबारी और इतिहासकार अबुल फज़ल ने अपनी 'आईन-ए-अकबरी' में दो जगह कबीर का ज़िक्र किया है। इस किताब में अकबर के पूरे साम्राज्य का बारीक वर्णन है। उड़ीसा के 'पुरी जगन्नाथ' के संदर्भ में कहा गया है:

"कुछ लोग मानते हैं कि एकेश्वरवादी कबीर यहां दफनाए गए हैं, और आज भी इनकी कथनी और करनी के बारे में कई विश्वसनीय बातें सुनने को मिलती हैं। हिंदू और मुसलमान दोनों उनके समदर्शी प्रबुद्ध विचारों की खातिर उनका सम्मान करते हैं। जब उनकी मृत्यु हुई तो उनके शरीर को ब्राह्मण चिता पर जलाना चाहते थे और मुसलमान दफनाना चाहते थे।"

अवध के संदर्भ में अबुल फज़ल फिर लिखते हैं:

"कुछ लोग कहते हैं कि रतनपुर में एकेश्वरवादी कबीर का मकबरा है। आध्यात्मिक ज्ञान का दरवाज़ा उनके लिए खुला था और वे अपने समय के दकियानूसी विचारों का तिरस्कार कर चुके थे। हिंदी भाषा में आध्यात्मिक गूढ़ार्थ से भरपूर उनकी कई कविताएं आज भी उपलब्ध हैं।"

तो कबीर के मरने के लगभग 150 साल बाद यह स्थिति थी। नाभाजी या अबुल फज़ल कबीर के जीवन की विस्तृत चर्चा नहीं करते लेकिन कबीर के बारे में दोनों की समझ एक-सी है।

वैष्णव और भक्ति संप्रदाय ने कबीर को निस्संदेह अपनाया लेकिन सूफी परंपरा में कबीर का स्थान काफी विवादों से घिरा रहा। शायद इसीलिए अबुल फज़ल ने उन्हें एकेश्वरवादी (मुवाहिद) कहा न कि मुसलमान। सूफी साहित्य से पता चलता है कि देहली के सूफी मठों में कबीर के पद गाए जाते थे, लेकिन इस बात को लेकर काफी विवाद रहा कि कबीर के विचार इस्लामी संप्रदाय के अनुरूप हैं या नहीं।

उपरोक्त बातों से प्रतीत होता है कि सन 1600 तक कबीर की जीवनी की ओर लोगों का ध्यान विशेष रूप

से नहीं खिंचा था। हमारे स्रोतों का ज़्यादा ज़ोर कबीर के व्यक्तित्व और विचारों पर है। कबीर के गुरु और उनके अंतिम संस्कार के बारे में कुछ-कुछ अधपकी बातें ज़रूर मिलने लगती हैं। ये बातें बाद में जाकर विकसित रूप ले लेती हैं।

वैष्णव सप्रदाय में

1712 में प्रियादास ने नाभाजी के 'भक्तमाल' पर एक टीका लिखी। टीका का नाम था 'भक्तिरसबोधिनी'। इसमें कबीर के जीवन की कई चमत्कारी घटनाओं का ज़िक्र है। इन घटनाओं में से सबसे महत्वपूर्ण है – उनका रामानंद का शिष्य बनना। कबीर 'तुर्क' यानी मुसलमान थे तो उनका रामानंद का शिष्य बनना आसान नहीं था। वे एक दिन बनारस के घाट पर सुबह-सुबह जाकर लेट गए। रामानंद अनजाने में ऊषाकाल के अंधेरे में कबीर से टकरा जाते हैं और अनायास ही उनके मुंह से 'राम-राम' निकल पड़ता है। तो रामानंद के हाथों इस तरह कबीर की दीक्षा हुई!

प्रियादास ने 'गुरु ग्रंथ साहब' में पाए जाने वाले उस पद की विवेचना की है जिसमें कबीर और सुल्तान सिकंदर लोदी का आमना-सामना हुआ। टीकाकार बताते हैं कि काशी के पंडितगणों ने काज़ी से कबीर की शिकायत की। 'कबीर को ज़ंजीरों से बांधकर सुल्तान सिकंदर के सामने लाया गया। (सिकंदर तो देहली का बादशाह था। प्रियादास बताते हैं कि वह उन दिनों काशी का दौरा कर रहा था।) कबीर केवल राम के आगे झुक सकते थे, सो उन्होंने सुल्तान के आगे झुकने से इनकार कर दिया। कबीर को सज़ा-ए-मौत सुना दी गई। हाथ पांव बांधकर उन्हें गंगा में छोड़ दिया गया, फिर आग में डाल दिया गया और फिर मस्त हाथी के पैरों तले कुचलने के लिए डाल दिया गया... ज़ाहिर है कबीर को कोई हानि नहीं पहुंची और अंततः सुल्तान उनके पांव पड़ा।'

एक और किस्सा है कि देवलोक की अप्सराएं कबीर को मोहित करने के प्रयास में विफल होकर लौटीं और चतुर्भुज विष्णु ने कबीर को दर्शन दिया। ऐसे कई और किस्से हैं जिनका ज़िक्र यहां ज़रूरी नहीं है।

विचारधारा से उलट

लेकिन इस पूरे वृत्तांत में एक समस्या है। आमतौर पर माना जाता रहा है कि रामानंद 1410 में मरे (संभव है कि वे इससे काफी पहले ही स्वर्ग सिधार चुके हों क्योंकि तब तक उनकी उम्र 111 वर्ष हो गई थी)।

एक उत्तर मुगलकालीन चित्र में कबीर। यह चित्र लंदन के ब्रिटिश संग्रहालय में रखा हुआ है।

दूसरी ओर सुल्तान सिकंदर लोदी का शासन काल 1488 से 1512 था। अगर कबीर वाकई 1410 के आसपास रामानंद के शिष्य बने तो उनका जन्म कम-से-कम 1395 के आसपास हो जाना चाहिए था। सिकंदर लोदी से मुलाकात करने के लिए उन्हें और 100 साल इंतज़ार करना पड़ता!

सिकंदर तो उन्हें मार नहीं पाया, तो निश्चित ही कबीर कुछ और वर्ष जीवित रहे होंगे, यानी वे सौ साल से भी ज़्यादा जीवित रहे! दंत कथाओं में सौ साल से ज़्यादा जीवित रहना कोई असामान्य बात नहीं है, लेकिन यथार्थ में यह थोड़ा मुश्किल लगता है।

अठारहवीं शताब्दी (यानी प्रियादास के समय में जबकि उत्तर भारत में वैष्णव संप्रदाय काफी संपन्न और शक्तिशाली संप्रदाय बन चुका था) तक आते-आते कबीर की जीवनी में हम नए मोड़ देखते हैं – "कबीर के व्यक्तिगत जीवन की कई घटनाओं पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। कबीर को विशुद्ध रूप से वैष्णव संप्रदाय से जोड़ने का प्रयास दिख रहा है; कबीर को रामानंद का शिष्य बनाया गया है। लेकिन वे अन्य शिष्यों की तरह रामानंद से उनके संप्रदाय के ग्रंथों व मतों का अध्ययन नहीं करते। बल्कि उन्होंने रामानंद से सिर्फ भूले-भटके 'राम राम' शब्द सुना और चमत्कारी रूप से उसी से उन्हें समस्त वैष्णव संप्रदाय का ज्ञान हो गया और वे तुर्क से वैष्णव बन गए।" कबीर का रामानंद से नाता जोड़ने का यह प्रयास काफी बनावटी-सा लगता है। उपरोक्त अन्य दो घटनाओं से भी ऐसा ही आभास मिलता है।

राजा द्वारा किसी विरोधी को मारने के प्रयास में पानी में डुबोना, आग में जलाना और हाथी से कुचलवाना जैसी बातें मध्यकाल में हिंदू भक्ति साहित्य में अच्छी तरह से स्थापित थीं। (लगभग यही बातें तमिल भक्त अप्पर के संदर्भ में तेरहवीं शताब्दी के एक भक्त जीवन संग्रह में मिलती हैं।) तपस्वियों व भक्तों को अप्सराओं द्वारा लुभाए जाने की बात पौराणिक कथाओं में काफी सामान्य है।

कबीर आजीवन, सगुण ईश्वर उपासना के पक्ष में नहीं थे और मौका मिलने पर ईश्वर की सगुण कल्पना का मज़ाक उड़ाते रहे थे। वे अपने ही घट में ईश्वर को पाने की बात करते थे। लेकिन वैष्णव साहित्य के अनुसार उनका ईश्वर से साक्षात्कार कैसे होता है – चार हाथों वाले मुकुटधारी विष्णु के दर्शन से!

कबीर ने हिंदू, तुरक और जोगी, सभी से अपने आपको अलग रखा, सभी को समान रूप से फटकारा और समझाया। लेकिन अब उनके माथे पर टीका लगाकर उन्हें वैष्णव बना दिया गया।

आज तक जारी प्रयास

आज से कोई पच्चीस साल पहले की बात है। एक जगह कथा का कार्यक्रम था। कथाकार दक्षिण भारत के पंडित थे। वे मध्यकालीन भक्ति संतों की जीवनियां सुना रहे थे। रोज़ एक भक्त की कहानी सुनाई जाती थी। एक दिन कबीर की भी बारी आई। कई लंबे और रोचक किस्से सुनाए गए उनके बारे में। उनमें से एक मुझे आज भी याद है – "एक बार कबीर काम से कहीं बाहर गए थे। इसी बीच काशी के राजा ने अनजाने में गोहत्या या किसी ब्राह्मण बालक की हत्या कर दी थी। राजा चिंताकुल और शोकाकुल होकर कबीर के घर आ पहुंचा कि इस महापाप से मुक्ति कैसे पाए। कबीर तो घर पर नहीं थे। सो उनके पुत्र कमाल ने राजा को आश्वस्त किया और कहा कि एक चौराहे पर खड़े होकर तीन बार राम का नाम लो, तुम्हारे पाप धुल जाएंगे। राजा खुश होकर लौटा। कबीर के घर लौटने पर बालक ने उन्हें पूरी बात बताई। बात सुनकर कबीर अत्यंत क्रुद्ध हुए। गुस्से में उन्होंने कमाल को मार-मार कर उसका भुरता बना दिया। आस-पड़ौसी उन्हें रोकने आए। किसी को भी समझ नहीं आया कि कबीर आखिर बालक से क्यों नाराज़ हैं। जब कबीर का गुस्सा ठंडा हुआ, तो उन्होंने बताया कि इसने कैसे कह दिया कि 'तीन बार' राम का नाम लेने की ज़रूरत है। राम के नाम को एक बार ही लेने से तमाम पाप धुल जाते हैं।" मुझे पच्चीस साल पहले भी यह बात पची नहीं थी – भला दो बार ज़्यादा राम नाम लेने से क्या हर्ज हो सकता है?

इस किस्से को बताने का मकसद यही है कि कैसे किसी के वास्तविक विचारों को एकदम दरकिनार करके उसे ऐसे किस्से कहानियों के माध्यम से शक्तिशाली परंपराओं में शामिल किया जा सकता है।

कबीरपंथी साहित्य में

लेकिन इसी दौरान कबीरपंथियों का भी उदय होने लगता है। पंथ का शुरुआती इतिहास काफी अस्पष्ट है। यद्यपि कबीरपंथी मानते हैं कि कबीर ने खुद इस पंथ की शुरुआत की थी। नानक ने अपने अनुयाइयों के नेतृत्व के लिए गुरु पद की स्थापना की थी। लेकिन कबीर ने भी ऐसा किया इसका कोई समकालीन प्रमाण नहीं है। संभवतः कबीरपंथ ने लगभग सत्रहवीं शताब्दी के अंत या अठारहवीं शताब्दी में ज़ोर पकड़ा। उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश के दलित जाति के लोग इस पंथ की ओर आकृष्ट हुए। पंथ के बड़े-बड़े संपन्न मठ बने, जिन्हें कई जगह राजाश्रय प्राप्त हुआ। पंथ का यह सतत प्रयास रहा कि ब्राह्मण-वादी आदर्शों को अपनाकर दलित,

कबीर पंथियों के कबीर

समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करें। इसीलिए स्वच्छता, शाकाहारी भोजन, मद्य-धूम्रपान निषेध, आदि पर ज़ोर दिया जाने लगा। साथ ही ब्राह्मणवादी समाज, कबीरपंथियों को प्रतिष्ठित माने इसका भी भरपूर प्रयास किया गया। इसी प्रयास का असर उनके द्वारा लिखी गई कबीर की जीवनियों में झलकता है।

आजकल कबीरपंथियों द्वारा लिखी जाने वाली कबीर की जीवनियां मुख्य रूप से अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी के साहित्य पर आधारित प्रतीत होती हैं। इनमें कबीर को ब्रह्म-तत्व के अवतार के रूप में पेश किया जाता है – "चमत्कारी रूप से एक विधवा ब्राह्मण महिला की कोख में बगैर पुरुष संबंध के कबीर अवतरित हुए...।" कुछ यह भी मानते हैं कि कबीर कमल के फूल पर तैरते पाए गए। इस बच्चे को मुसलमान जुलाहे परिवार ने पाला पोसा।

ज़ाहिर है कि जीवनी के लेखकों को कबीर का मुसलमान होना काफी अखर रहा था। वे नहीं चाहते थे कि कबीर का जन्म ऐसे परिवार में हो। ब्राह्मण विधवा की कोख से जन्म लेने की कहानी बनाना इसी मनोवृत्ति का परिणाम है। कई लेखक यह भी बताते हैं कि बच्चे ने चमत्कारी रूप से अपनी सुन्नत को भी रोका। आखिर वह मुसलमान नहीं था ना!

क्या खोजा और मिला

तो हम निकले थे कबीर की जीवनी की खोज में। लेकिन हमें मिला उस जीवनी का इतिहास! उनकी वाणी की तरह उनकी जीवनी भी जीवंत रही है जो सुनने-सुनाने वालों की ज़रूरतों के हिसाब से बढ़ती, बदलती गई। ऐसे में एक इतिहासकार भला क्या कर सकता है?

वह इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि कबीर के जीवन से संबंधित कोई समकालीन प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं होने के कारण कोई ठोस

बात नहीं कही जा सकती है। सामान्य रूप में कबीर की जीवनी के नाम से उपलब्ध जानकारी मनगढ़ंत और अविश्वसनीय है। लेकिन इस पूरी प्रक्रिया में इतिहासकार ने शायद 'बेहद के मैदान' की झलक पाई होगी। कबीर, कागद पर नहीं है, वह लोगों की जुबान पर ज़िंदा है। लोगों ने उसके अक्खड़ दर्शन, किसी ताकत से समझौता न करनेवाली तार्किक दृष्टि, मानवतावाद और अखंड प्रेम, इनको आत्मसात कर लिया है। उस दृष्टिकोण को जहां भी वे अपनाते हैं, वहां कबीर फिर से जीवित हो जाता है। यह वास्तव में एक 'बेहद का मैदान' है।

अब रहा सवाल जीवनी का। हमने देखा कि जो कबीर के विचारों से अवगत थे उन्होंने उसकी जीवनी पर ध्यान नहीं दिया। कबीर की जीवनी उनके लिए महत्वपूर्ण बनती गई, जो कबीर के विचारों से हट रहे थे या उनको पलट रहे थे। वे कबीर की दृष्टि की जगह उनकी मूर्ति स्थापित करना चाहते थे।

पंड़ित मुल्ला जो लिखि दीया।
छांडि चले हम कछू न लीया॥
रिदै खलासु निरख ले मीरा।
आजु खोजि खोजि मिलै कबीरा॥

(सी. एन. सुब्रह्मण्यम – एकलव्य के सामाजिक अध्ययन शिक्षण कार्यक्रम समूह के सदस्य।)

इस बार का सवाल

सवालः दूध में नींबू डालने से वह फटता क्यों है?

गगन बंसल, कक्षा सातवीं
गढ़ीपुरा, हरदा,
जिला होशंगाबाद

हो सकता है कि कभी आपने भी इस सवाल के बारे में सोचा हो। अगर आपके पास इससे जुड़ी कोई जानकारी है तो हमें लिख भेजिए। हमारा पता हैः संदर्भ, द्वारा एकलव्य, कोठी बाज़ार, होशंगाबाद, 461 001.

ज़रा सिर तो खुजलाइए

तीन स्विच से जला बल्ब

एक ही बल्ब को दो स्विचों से जलाने की गुत्थी तो पिछली बार सुलझ गई थी, लेकिन एक सवाल उठा था, बल्ब को तीन या ज़्यादा स्विचों से जलाने का – तीन लोगों ने सही जवाब दिए। पहला जवाब है हैदराबाद विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र के शिक्षक *नरेश शर्मा* का।

ग्यारहवां अंक मिलने पर स्विच से संबंधित सवाल देखा। चूंकि 'टू वे स्विच' का परिपथ पहले से मालूम था इसलिए सोचा 'थ्री वे स्विच' की पुनर्खोज की जाए। वाकई थोड़ा सिर तो खुजलाना पड़ा। इसका एक मुख्य कारण था 'टू वे स्विच' की बनावट पता होना। क्योंकि उसी प्रकार के तीन स्विचों को विद्युत परिपथ में जोड़ना संभव नहीं दिख रहा था।(कुल मिलाकर नौ बिन्दुओं को तार से जोड़ना पड़ता, जिनमें से दो विद्युत के प्रवेश करने और बाहर निकल जाने वाले होते थे – क्योंकि इतना तो निश्चित ही है कि सभी स्विच श्रेणीगत लगेंगे, समान्तर परिपथ में नहीं)।

लेकिन इसका हल तो बिल्कुल आसान था। अगर 'टू वे स्विच' को दो सिरे के स्विच मान लें तो करना महज़ इतना था कि बीच में स्विच लगाकर तारों की अदला बदली कर दी जाए।

नीचे दिए गए स्विच और परिपथ के अनुसार एक बल्ब को चाहे जितने स्थानों से जलाया, बुझाया जा सकता है। उसमें दो प्रकार के स्विचों का प्रयोग होगा। इन्हें 'सिरे का स्विच' और 'मध्य स्विच' नाम दिया जा सकता है। किसी-भी परिपथ में दोनों सिरों पर एक-एक 'सिरे का स्विच' लगेगा। शेष सभी स्विच 'मध्य स्विच' होंगे।

सिरे का स्विच: यह बारहवें अंक में दिखाया गया 'टू वे स्विच' है। इसका रेखा चित्र इस तरह होगा;
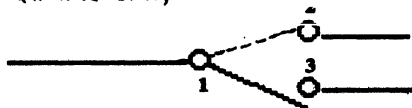
स्विच के बिन्दु 1 को या तो बिन्दु 2 के साथ या बिन्दु 3 के साथ जोड़ा जा सकता है।

मध्य स्विचः इसका रेखा चित्र इस तरह होगाः
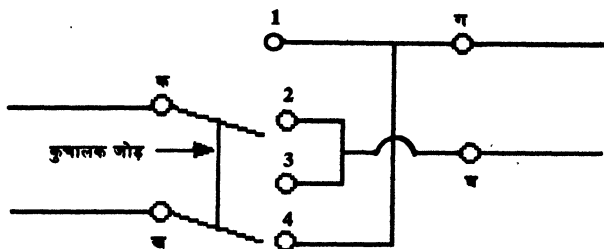
स्विच ऊपर करने पर 'क' '1' से और 'ख' '3' से जुड़ता है, यानी कि 'क' और 'ग' बिन्दु जुड़ जाते हैं और 'ख' और 'घ' बिन्दु जुड़ जाते हैं। स्विच नीचे करने से 'क', '2' से और 'ख', '4' से जुड़ता है, यानी कि उस स्थिति में 'क' का संबंध 'घ' से और 'ख' का संबंध 'ग' से हो जाता है। स्विच ऊपर-नीचे करने से बाएं पक्ष के तारों के दाएं तारों से जुड़ाव में अदला-बदली हो जाती है। इस प्रकार के स्विच को कई प्रकार से बनाया जा सकता है, जो सभी रेखाचित्र में समान रूप से दर्शाए जाएंगे। दो बनावटें यहां प्रदर्शित हैं।

1. 'टू वे स्विच' में थोड़ी तब्दीली करके:

2.
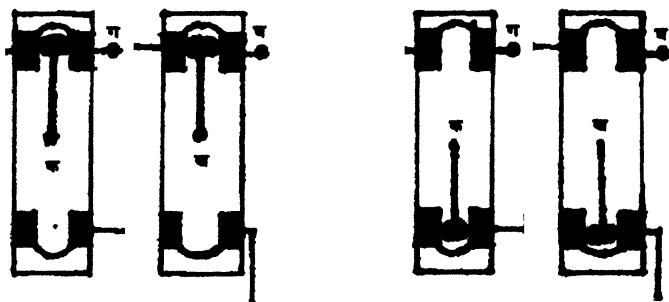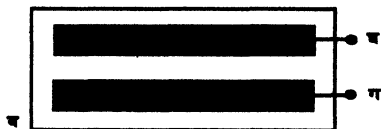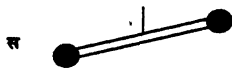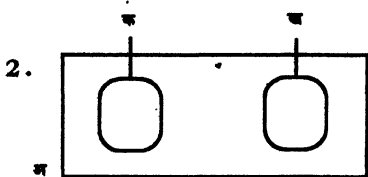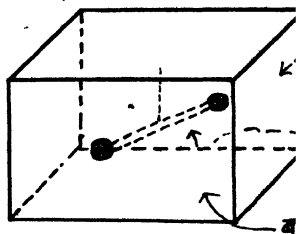
स्विच की असेंबली
दर्शित स्थिति में स्विच ऊपर है और क–ग तथा ख–घ जुड़े हैं। स्विच नीचे करने से क–घ और ख–ग जुड़ते हैं।

इस स्विच का सरल रेखाचित्र ऊपर और नीचे की स्थिति में नीचे दिखाए समान माना जा सकता है:
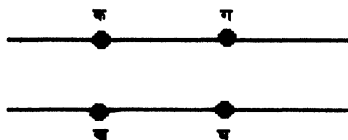
तीन स्विचों से बल्ब जलने और बुझने की स्थितियां: स्विच संख्या 1, 2, 3 और स्थिति ऊपर-नीचे।
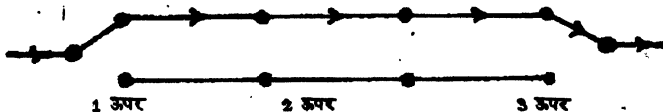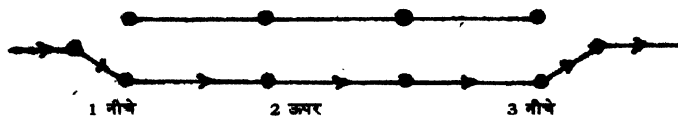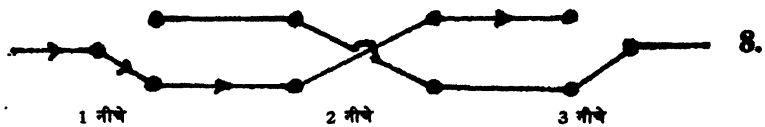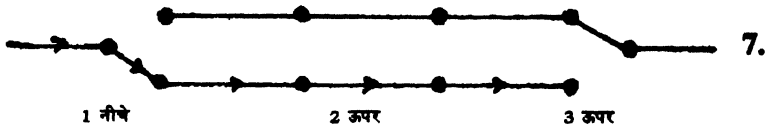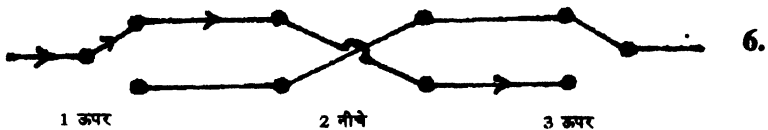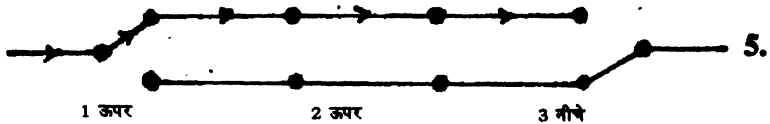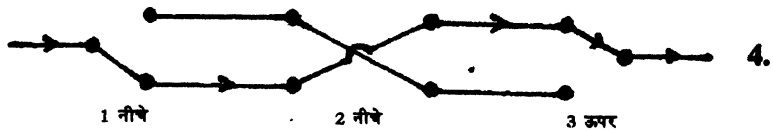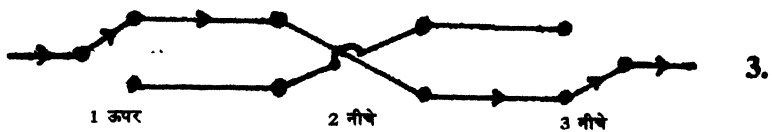
1, 2, 3 और 4 स्थितियों में बल्ब जलेगा।
5, 6, 7 और 8 स्थितियों में बल्ब नहीं जलेगा।

यदि वर्तमान स्थिति में परिपथ एक जैसे हैं (बल्ब जला) तो किसी भी एक स्विच को नीचे करने से बल्ब बुझेगा। ऐसा ही बुझे हुए परिपथ के साथ होगा।

अंत में दो-दो साधारण स्विच जोड़कर बनाये गये 'टू वे स्विच' के विषय में – वास्तव में यह 'टू वे स्विच' ही है जिसमें दोनों खटकों को अलग-अलग स्वतंत्र रूप से ऊपर नीचे नहीं किया जा सकता। या कहें कि यह 'जालसाज़ी' 'टू वे स्विच' का बीज है। और इस बनावट (साधारण स्विचों की जोड़ी) में यदि एक स्विच ऊपर और एक नीचे किया तो यह 'टू वे स्विच' का कार्य नहीं करेगा।

फोर वे स्विच और जला बल्ब

इस जवाब में 'इंटरमिडिएट स्विच' और 'टू वे स्विच' का उपयोग कर परिपथ बनाया गया है। इसे बनाया है उज्जैन के *के. एस. सक्सेना* ने।

तीन स्विचों के बल्ब जलाने के लिए मैंने एक 'फोर वे स्विच' (इंटरमिडिएट स्विच) और दो 'टू वे स्विच' का उपयोग किया है।

'टू वे स्विच' का परिपथ तो संदर्भ के पिछले अंक में दिया जा चुका है। और 'फोर वे स्विच' कुछ इस तरह दिखता है। चित्र में दाहिनी ओर वायर लगाने के लिए दो स्थान दिख रहे हैं। स्विच के बाईं ओर भी इसी तरह के दो स्थान होते हैं। इसकी दो स्थितियां होती हैं।
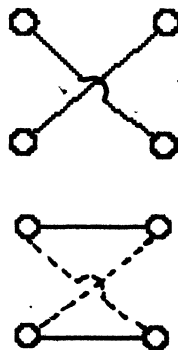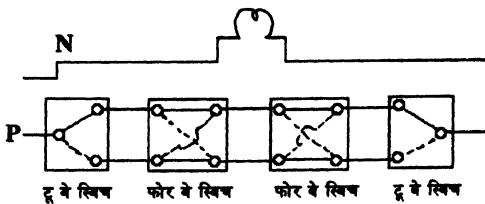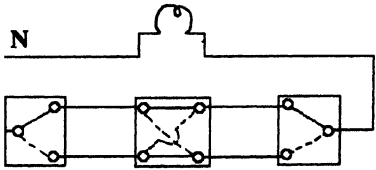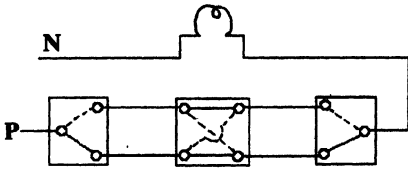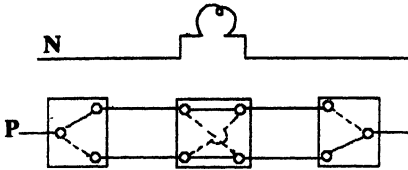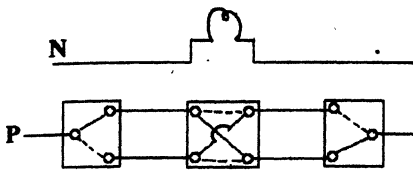
पहले परिपथ में दो टू वे स्विच और एक फोर वे स्विच का परिपथ है। इसमें स्विचों की स्थिति के अनुसार बल्ब जलेगा।

दूसरे चित्र में फोर वे स्विच के चलने (स्थिति बदलने) पर बल्ब बंद अवस्था में होगा।

तीसरे चित्र में टू वे स्विचों का इस्तेमाल करने पर बल्ब पुनः जलने लगेगा।

चौथे चित्र में दोनों टू वे स्विचों का उपयोग करने पर बल्ब फिर से जलने लगेगा। (यानी किसी एक को चलाने पर बंद और दूसरे को चलाने पर पुनः जलना)।

इस तरह चारों परिपथों की मदद से तीन स्विचों की स्थिति में बल्ब के जलने की प्रक्रिया देखी जा सकती है।

यदि हम बल्ब को तीन से अधिक जगह से जलाना चाहें तो उतने ही फोर वे स्विचों का इस्तेमाल करना पड़ेगा (आखिरी परिपथ)।

मल्टी वे स्विच

एक ही बल्ब को कई जगह से नियंत्रित करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक परिपथ भी बन सकता है। इसे सुझाया है होशंगाबाद के *मोहम्मद रज़्ज़ाक और इरफान खान* ने।
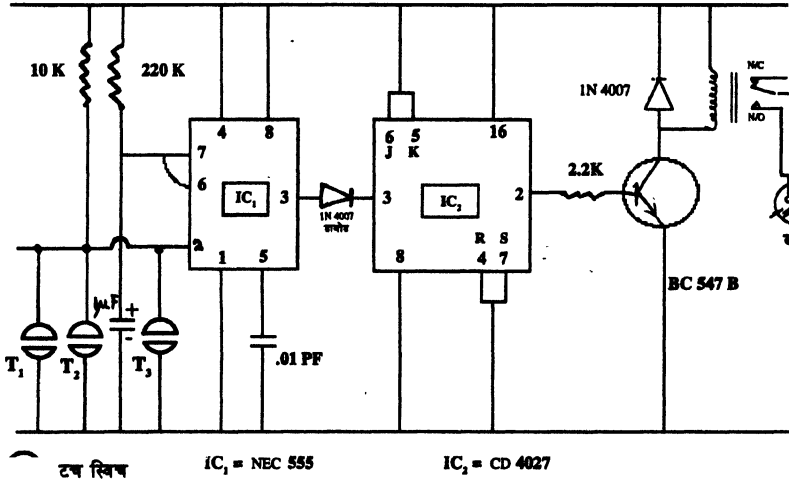
नोट: रिले की कॉयल (Coil) पर 9v D.C. करंट दिया जाता है। यह ट्रांजिस्टर BC 547 B से नियंत्रित होता है। आऊटपुट के लिए अलग से 220 वोल्ट A.C. सप्लाई ली जाती है। दो सुचालक पट्टियों से बनाए गए टच स्विच (T) से रिले नियंत्रित होगी। ऐसे जितने भी टच स्विच लगाएंगे उन सब जगहों से आप बल्ब नियंत्रित कर सकते हैं।

+9 V DC
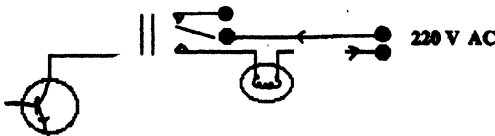
(इस बार का पूरा सिर तो खुजलाइए पृष्ठ नंबर 89 पर)

कैसे बनेगा सहबंध

सुशील जोशी
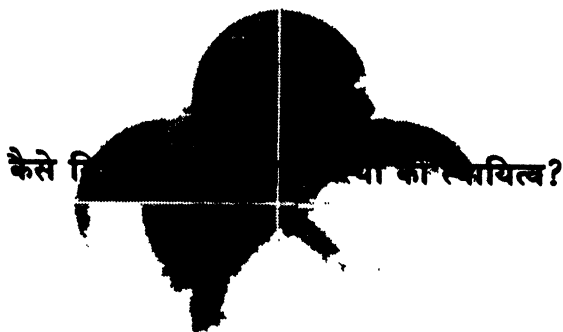
परमाणुओं के बीच इलेक्ट्रॉनों की साझेदारी से जब अणु बनते हैं तो उसे सहसंयोजी बंधन या सहबंध कहते हैं। आयनिक बंध के मामले में हमने देखा था कि एक तत्व अपना इलेक्ट्रॉन त्याग देता है और दूसरा तत्व उसे ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार से धनायन व ऋणायन बनते हैं। इनके बीच परस्पर आकर्षण इस व्यवस्था को स्थायित्व प्रदान करता है। यहां हम यह देखने की कोशिश करेंगे कि 'सहबंध व्यवस्था' को स्थायित्व कैसे मिलता है। इसे समझने के लिए प्राय: दो अलग-अलग मॉडलों का इस्तेमाल किया जाता है:

1. संयोजी बन्धन मॉडल या सिद्धांत (Valence Bond Theory)
2. आण्विक कक्षक मॉडल या सिद्धांत (Molecular Orbital Theory)

ये दोनों ही सिद्धांत क्वांटम यांत्रिकी के सिद्धांतों पर आधारित हैं।

क्या है कक्षक

यहां प्रस्तुत मॉडलों में कई किस्म के भ्रम होने की संभावना है। मसलन बोर ने परमाणु संरचना के संदर्भ में इलेक्ट्रॉन कक्षा की अवधारणा प्रस्तुत की थी। मान्यता यह थी कि इलेक्ट्रॉन इस कक्षा के मार्ग पर केन्द्रक के इर्द-गिर्द भ्रमण करता है। परन्तु आगे चलकर कक्षक (ऑर्बिटल) की अवधारणा विकसित हुई। विभिन्न कक्षकों के चित्र भी किताबों में मिल जाएंगे। दरअसल कक्षक एक गणितीय अवधारणा है। यह तो आप जानते ही होंगे कि प्रत्येक कण के साथ एक तरंग संबद्ध होती है। कक्षक वास्तव में इस तरंग का तरंग फलन (Wave function) हैं। इसका वर्ग हमें इलेक्ट्रॉन के पाए जाने की सम्भाविता का आभास देता है। इस सम्भाविता को इलेक्ट्रॉन घनत्व के रूप में या समघनत्व रेखाओं (कन्टूर) के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। कक्षक किसी तरंग समीकरण की मात्र चित्रात्मक प्रस्तुति भर है।

यह भी ध्यान रखना होगा कि इलेक्ट्रॉन घनत्व के सारे चित्र एक त्रि-आयामी स्थान की दो-आयामी प्रस्तुती हैं।

लिहाज़ा इनमें इलेक्ट्रॉन को मूलतः एक तरंग द्वारा दर्शाया जाता है तथा सारी गणनाएं व परिकल्पनाएं तरंग-समीकरणों के आधार पर की जाती हैं। इनमें निश्चित रूप से काफी सारा गणित शामिल होता है। मैं इस गणित से बचना चाहूंगा। पहला कारण यह है कि उससे बातचीत बहुत बोझिल व पेचीदा हो जाएगी। दूसरा कारण यह है कि गणित मुझे आता नहीं है।

फर्क दोनों मॉडल में

दोनों ही सिद्धांत कई किस्म के लगभगीकरण और सरलीकरण पर टिके हैं। इलेक्ट्रॉन तरंगों की सरलतम समीकरणों को सुलझाना भी आसान काम नहीं है। जब परमाणु से अणु बनते हैं तो कई-कई इलेक्ट्रॉन, कई-कई परिस्थितियों में, कई-कई नाभिकों के तंत्र के रूप में परस्पर किया करते हैं। ये तंत्र इतने जटिल होते हैं कि इनकी परस्पर क्रिया की समीकरणों को लिखना व फिर उन्हें हल करना असम्भव-सा ही होता है। लिहाज़ा आप कई सारी अंतक्रियाओं को अनदेखा कर देते हैं, मान लेते हैं कि वे नगण्य हैं। इस तरह से लगभगीकरण से ही समझने योग्य मॉडल उभरते हैं। मसलन, दोनों ही सिद्धांतों में बाह्यतम कक्षक के इलेक्ट्रॉनों पर ही गौर किया जाता है।

इन दो सिद्धांतों में मुख्य अन्तर

क्या है? — संयोजी बंधन सिद्धांत की मूल बात यह है कि इसमें परमाणु के कक्षकों की ही परस्पर क्रिया के आधार पर अणु या बन्धन का निर्माण किया जाता है। हां, यह ज़रूर है कि अन्तर्क्रिया से पूर्व अलग-अलग परमाणुओं के कक्षकों में परिवर्तन होते हैं। मगर अन्ततः अणु में परमाणुओं के कक्षक मौजूद रहते हैं।

दूसरी ओर आण्विक कक्षक सिद्धांत सहबंध की समस्या पर गौर करते हुए यह मान्यता प्रस्तुत करता है कि परमाणुओं की आपसी क्रिया व अणु बनने के दौरान नए सिरे से कक्षकों का निर्माण होता है जिन्हें आण्विक कक्षक कहते हैं। फिर इलेक्ट्रॉन इन आण्विक कक्षकों में मौजूद रहते हैं।

इस मुख्य अंतर को समझ लेने के बाद, आइए, दोनों सिद्धांतों पर स्वतंत्र रूप से विचार करें।

संयोजी बंधन मॉडल

यह मॉडल मूलतः लुइस के विचारों का ही विस्तार है। लुइस ने यह विचार सामने रखा कि दो परमाणु आपस में एक-एक इलेक्ट्रॉन की साझेदारी करके

तरंग फलन

तरंग फलन (Wave Function) का अर्थ क्या है?

आमतौर पर हम तरंग के आयाम (amplitude) तथा तरंग लंबाई की बात करते हैं। आयाम के आधार पर विचलन का परिमाण पता चलता है। अधिकतम विचलन ही तरंग का आयाम कहलाता है। तरंग लंबाई से पता चलता है कि यह विचलन कितनी आवृति से होता है।

जब हम पदार्थ-तरंगों की बात करते हैं तो उसका तरंग फलन ज्ञात करते हैं। हम यह देखने की कोशिश करते हैं कि तरंग फलन प्रत्येक बिन्दु पर किस तरह परिवर्तित होता है। तरंग फलन एक तरह से आयाम का ही द्योतक है मगर चूंकि यहां पदार्थ-तरंगों की बात हो रही है इसलिए यह थोड़ा अलग भी होता है। ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि तरंग फलन के वर्ग से हमें किसी स्थान पर उस पदार्थ (कण) के पाए जाने की संभाविता का पता चलता है। किसी भी स्थान के तरंग फलन के तीन घटक होते हैं। हमें यह देखना होता है कि x, y और z अक्ष पर तरंग फलन किस ढंग से बदलता है। इन तीनों घटकों से मिलकर जो तरंग फलन बनता है उसका वर्ग किसी भी स्थान पर इलेक्ट्रॉन के पाए जाने की संभाविता दर्शाता है।

परस्पर बंधन बनाते हैं। मसलन हाइड्रोजन के एक परमाणु में केन्द्रक के इर्द-गिर्द एक ही इलेक्ट्रॉन होता है। लुइस के मॉडल में इसे निम्नानुसार दर्शाया जाता है : H•। अब हाइड्रोजन के दो परमाणु इस तरह क्रिया करेंगे-

H• + H• → H:H या H – H

किसी वजह से H:H व्यवस्था H• और H• के अलग-अलग रहने की तुलना में ज़्यादा स्थाई है।

आगे चलकर लाइनस पॉलिंग, कूल्सन, स्लैटर आदि ने इस मॉडल को और बेहतर बनाया। यदि गणितीय भाग को छोड़ दें तो मूल बात यह है कि इस मॉडल के मुताबिक दो परमाणुओं के कक्षकों (यानी इलेक्ट्रॉन घनत्व) में ओवरलैप (अतिव्यापन) होता है। अर्थात कक्षक एक-दूसरे को कुछ हद तक ढंक लेते हैं और उतने हिस्से में इलेक्ट्रॉन घनत्व बढ़ जाता है। यह बढ़ा हुआ घनत्व दोनों केन्द्रकों के बीच में होता है। दोनों ही केन्द्रक इसे अपनी-अपनी ओर खींचते हैं। लिहाज़ा ये इलेक्ट्रॉन व केन्द्रक आपस में बंध जाते हैं तथा पूरी व्यवस्था की ऊर्जा कम हो जाती है। देखा गया है कि इलेक्ट्रॉन को विचरण के लिए जितनी ज़्यादा जगह मिलती है, पूरी व्यवस्था की ऊर्जा उतनी कम होती है। यहां प्रत्येक

हाइड्रोजन की संरचना

यदि हाइड्रोजन अणु बनने की क्रिया को तरंग फलन (Wave Function) के आधार पर देखें तो कुछ ऐसा चित्र उभरता है:

प्रत्येक हाइड्रोजन परमाणु में एक इलेक्ट्रॉन है। इसलिए दो परमाणुओं के दो तरंग फलन लिखे जा सकते हैं। जब ये दो परमाणु पास-पास आते हैं तो इनका एक संयुक्त तरंग फलन लिखा जा सकता है।

परन्त इस तरह से संयुक्त तरंग फलन तैयार कर लेने पर वह हाइड्रोजन अणु की ऊर्जा तथा बन्ध की लम्बाई से मेल नहीं खाता।

इस समीकरण में हमने शर्त यह रखी है कि प्रत्येक इलेक्ट्रॉन अपने-अपने केन्द्रक से जुड़ा रहेगा। यदि यह शर्त हटा दी जाए तो तरंग फलन में सुधार होगा। यह सुधार करने पर जो नतीजा प्राप्त होता है वह वास्तविक अवलोकनों से ज़्यादा मेल खाता है।

अभी भी हमने यह शर्त रखी है कि दोनों इलेक्ट्रॉन अलग-अलग परमाणुओं पर रहेंगे। ऐसा कोई जरूरी नहीं है। हालांकि इलेक्ट्रॉनों के बीच

महासागरों की तली में

लोग दुनिया भर में घूम रहे थे लेकिन महासागरों के बारे में अभी भी जानकारी बहुत थोड़ी थी। दरअसल महासागर इतने गहरे थे कि उनकी तली में उतरकर झांकना आसान काम नहीं था। पांचवें दशक तक आते-आते जब समुद्र विज्ञान काफी सारे नए उपकरणों से लैस हुआ तो महासागरों के अध्ययन ने ज़ोर पकड़ा और तेज़ी से नई-नई जानकारियां सामने आने लगीं।

इसमें सबसे महत्वपूर्ण खोज थी अटलांटिक महासागर के बीचों बीच तली में पहाड़ी शृंखला की एक लंबी पट्टी (समुद्री रिज) और महाद्वीपों के किनारों पर समुद्र-तली में गहरी-गहरी समुद्री खाइयों का मिलना।

एक-एक करके सभी महासागरों में इसी तरह की समुद्री पहाड़ियों की पट्टियां और गहरी खाइयां मिलती गईं। जब इन समुद्री रिजों की गहराई से छानबीन की गई थी तो पाया कि एक

उलटी होगी। क्योंकि नीचे की परत जम कर कड़ी हो गई है और उसमें जो जहां है वैसा ही फंसा रहेगा। चट्टानों की विभिन्न परतों में जमा चुंबकीय कणों की दिशाओं की शोध के बाद आज वैज्ञानिकों के पास लाखों साल पहले तक की जानकारी मौजूद है, जब-जब चुंबकीय पृथ्वी के ध्रुव पलटे हों।

कई सालों बाद मान लीजिए कि किसी वजह से चट्टान लुढ़क गई या अपनी मूल जगह से खिसक गई, ऐसे में उसमें जमे चुंबकीय कण जमे होने के कारण हिल नहीं सकते। संवेदनशील चुंबकत्वमापियों की मदद से पता लगाया जा सकता है कि कण किस दिशा में जमे हुए हैं। इसके बाद यह बताया जा सकता है कि निर्माण के दौरान चट्टान किस जगह पर थी।

पांचवें दशक में जब विभिन्न महाद्वीपों में चट्टानों के चुंबकत्व पर शोध हुए तो पता लगा कि महाद्वीप अपनी मूल जगह से काफी खिसके हैं। जैसे कि लंदन के पास एक चट्टानी इलाके में जब जांच पड़ताल हुई तो जो निष्कर्ष निकले उनके अनुसार ब्रिटेन पिछले बीस करोड़ साल में घड़ी की सुईयों के घूमने की दिशा में, उत्तरी ध्रुव के सापेक्ष तीस डिग्री घूम चुका है। इस घूमने के साथ ही यह अपने मूल स्थान से काफी खिसका भी है।

ऐसे अध्ययनों के दौरान स्थान के चुनाव के समय ध्यान रखा जाता है कि वे चट्टानें किसी स्थानीय कारणों से विचलित नहीं हुई हों, उसी मूल स्थान पर हों जहां कि उनका निर्माण हुआ था।

से दूसरे महासागरों में जाती ये पहाड़ी शृंखलाएं आपस में जुड़ी हुई हैं। साथ ही इनके बीचों-बीच गहरी दरारें भी मिलीं। कोई कांच का बर्तन चटक जाए, ये दरारें ऐसी नहीं होतीं। बल्कि काफी गहरी और कुछ किलोमीटर चौड़ी घाटियां होती हैं (देखें चित्र)। लेकिन पृथ्वी के आकार के मुकाबले इन्हें दरारें ही कहा जाएगा। इसी तरह खाइयां भी काफी गहरी होती हैं। इन स्थानों पर समुद्र का तल एकदम से नीचे की ओर गहरे मुड़ जाता है। अभी तक 11 किलोमीटर गहरी खाई मिल चुकी है।

हां, तो हम इन रिज और खाइयों के मिलने की बात कर रहे थे। लेकिन उस समय उलझन सिर्फ इन पहाड़ियों, इनकी दरारों या खाइयों की ही नहीं थी बल्कि तली की चट्टानों और इस तली पर जमी तलछट की परत को लेकर भी थी। यह तो मालूम था कि दुनिया भर की सारी नदियों द्वारा लाई गई तलछट, समुद्र में जमा होती है। अगर ये मान लें कि महासागर हमेशा से धरती पर हैं तो तलछट की परत तो अब तक बेइंतहा मोटी हो जानी चाहिए थी लेकिन वर्तमान में जो

रिज और खाई: संसार के सभी महासागरों में पहाड़ी शृंखलाओं की लंबी पट्टी मिलती है जिसे रिज कहते हैं। गहराई से खोजबीन करने के बाद पाया गया कि इन सब पहाड़ी पट्टियों में बीचों-बीच एक दरार है। अगर अटलांटिक रिज की आड़ी काट बनाएं तो वो ऐसी दिखेगी (ऊपर का चित्र)। चित्र में बाएं से दाएं ओर तक दर्शाई गई लंबाई 725 किलोमीटर है। बीच में इसी रिज का एक कम्प्यूटर चित्र है। इसमें जो दरार घाटी दिख रही है वह करीब दो किलोमीटर गहरी है।

नीचे: फिजी के पास स्थित एक समुद्री खाई (इसका नाम टोंगा है) की काट।
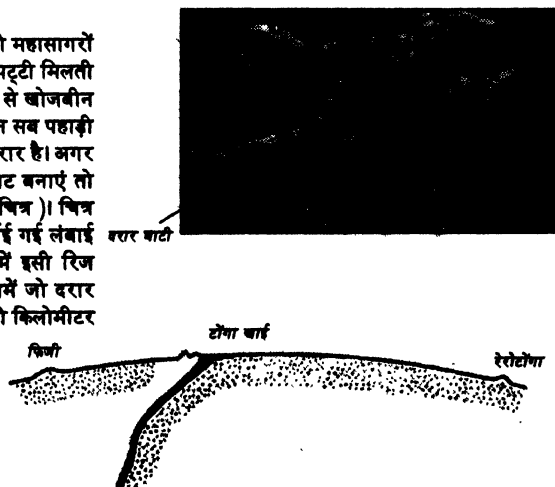
इलेक्ट्रॉन को उपलब्ध स्थान में वृद्धि हो रही है।

संयोजी बंध सिद्धांत में रासायनिक बंधन के लिए दो इलेक्ट्रॉन की जोड़ी बनती है तथा यह जोड़ी उन दो परमाणुओं के केन्द्रकों के बीच में स्थानबद्ध (Localized) होती है। यानी यह बंध एक स्थानबद्ध बंधन है।

आण्विक कक्षक मॉडल

इस मॉडल की प्रमुख मान्यता यह है कि जब नाभिकों को करीब लाया जाता है और साथ में इलेक्ट्रॉनों को भी जोड़ा जाता है तो ये इलेक्ट्रॉन नए सिरे से आण्विक कक्षकों में वितरित होते हैं। ये आण्विक कक्षक उसी तरह परिभाषित किए जाते हैं जिस तरह परमाणु के कक्षकों को किया जाता है। इनकी अपनी क्वांटम संख्याएं होती हैं।

जिस तरह परमाणु कक्षकों को s, p, d, f वगैरह नाम दिए गए हैं उसी तरह आण्विक कक्षकों को सिग्मा (σ), पाइ (π), डेल्टा (δ), फाई (ϕ) वगैरह नामों से पुकारा जाता है।

विकर्षण के चलते वे दूर-दूर रहेंगे मगर कभी कभार ज़रूर दोनों एक ही परमाणु पर पहुंच जाएंगे। तो हमें निम्नानुसार रचनाएं मिलेंगी :

$$H\text{-}H \longleftrightarrow H^{+}H^{-} \longleftrightarrow H^{-}H^{+}$$
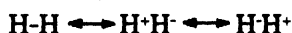
पहली रचना यानी हाइड्रोजन के दो परमाणुओं से बने एक अणु में दोनों इलेक्ट्रॉन बीच में स्थित हैं। दूसरी रचना में दोनों इलेक्ट्रॉन दूसरे परमाणु पर हैं। और आखिरी रचना में दोनों इलेक्ट्रॉन पहले परमाणु पर हैं।

इस तरह से विभिन्न शर्तों पर विचार करते हुए तरंग फलन का समीकरण लिखा जाता है और देखा जाता है कि कौन-सा तरंग फलन अणु के वास्तविक अवलोकनों के ज़्यादा करीब है। इन शर्तों से उस अणु की परिकल्पना उभरती है।

हाइड्रोजन अणु के लिए जो तरंग फलन है उसमें सहबंध व आयनिक बंध दोनों का योगदान है। हाइड्रोजन की लुइस रचनाएं $H\text{–}H \leftrightarrow H^{+}H^{-} \leftrightarrow H^{-}H^{+}$ हाइड्रोजन अणु की रचना में योगदान देती हैं। कई बार भ्रम हो जाता है कि हाइड्रोजन अणु इन तीन रचनाओं के बीच डोलता रहता है, यानी कभी यहां तो कभी वहां। यह सही नहीं है। हाइड्रोजन की संरचना तो एक ही है। लेकिन वह हमें पता नहीं है – परन्तु इन तीन रचनाओं के बीच कहीं है, यह हम ज़रूर कह सकते हैं।

परमाणु कक्षकों की परस्पर अंतर्क्रिया से आण्विक कक्षकों की गणना करने के कई तरीके हो सकते हैं। दरअसल सारे तरीके कुछ मान्यताओं यानी लगभगीकरण पर टिके हैं।

इनमें से एक तरीका है परमाणु कक्षकों का रेखीय सम्मिश्रण (Linear Combination Of Atomic Orbitals)। यह तरीका लगभग वैसा ही है जैसे हमने संकरण की क्रिया में एक ही परमाणु के कक्षकों के सम्मिश्रण में देखा था। अंतर सिर्फ यह है कि यहां एकाधिक परमाणुओं की बात हो रही है। सम्मिश्रित (आण्विक) कक्षक पूरे अणु के अंग होते हैं।

कुल मिलाकर प्रक्रिया यह है कि समस्त परमाणु कक्षकों के मेल से आण्विक कक्षक बना लिए जाएं। इसमें सुविधा के लिए सिर्फ बाह्यतम कक्षकों को ही लिया जाता है। जो आण्विक कक्षक बनते हैं उन्हें उनकी तुलनात्मक ऊर्जा के क्रम में जमा लिया जाता है और फिर इन्हें उपलब्ध इलेक्ट्रॉनों से भरा जाता है। जब सारे इलेक्ट्रॉन भर जाते हैं तो फिर गौर किया जाता है कि इसमें ऊर्जा की क्या स्थिति है। पूरी व्यवस्था की ऊर्जा परमाणुओं से कम हो तभी यह ज़्यादा स्थाई व्यवस्था होगी।

यहां कुछ सरल उदाहरणों से बात को समझने की कोशिश करते हैं।

कक्षकों का संकरण (Hybridisation)

संयोजी बंधन सिद्धांत में मूलतः यह माना जाता है कि परमाणुओं के कक्षकों की परस्पर क्रिया (ओवरलैपिंग) के ज़रिए पूरी व्यवस्था की ऊर्जा कम होने की स्थिति आती है। मगर इस अन्तर्क्रिया से पूर्व प्रायः परमाणुओं के कक्षकों में फेरबदल होते हैं। इस फेरबदल का परिणाम यह होता है कि कक्षकों के एक दूसरे को ढंकने का परिमाण बढ़ जाता है। इस तरह का एक फेरबदल कक्षकों का संकरण है।

उदाहरण के तौर पर कार्बन को लें – इसकी परमाणु संरचना निम्नानुसार है:

$C = 1s^2\ 2s^2\ 2px^1\ 2py^1$
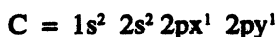
इस स्थिति में कार्बन परमाणु में px व py कक्षकों में एक-एक गैर युग्मित इलेक्ट्रॉन है। यानी कार्बन द्विसंयोजी होगा। परन्तु कार्बन के स्थाई यौगिकों में कार्बन चतुर्संयोजी होता है। संयोजी बंधन सिद्धांत में माना जाता है कि कार्बन के 2s कक्षक के एक इलेक्ट्रॉन को आगे बढ़ा दिया जाता है और वह 2pz कक्षक में पहुंच जाता है। इस उत्तेजित अवस्था की इलेक्ट्रॉनिक संरचना निम्नानुसार होती है:

मसलन H_2, H_2^+ तथा He_2 के बनने के उदाहरण लें।
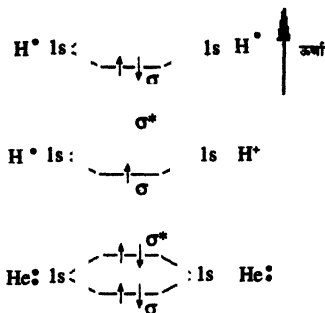
आण्विक कक्षक मॉडल में दो 1s कक्षकों की अन्तक्रिया से दो नए आण्विक कक्षक σ और σ* बनते हैं। जाहिर है कि σ कि ऊर्जा σ* से कम होगी।

पहले चित्र में H_2 में दोनों इलेक्ट्रॉन कम ऊर्जा वाले σ कक्षक में हैं। दूसरे चित्र में H_2^+ में केवल एक इलेक्ट्रॉन है, वह भी कम ऊर्जा वाले σ कक्षक में स्थित है। परन्तु आखिरी चित्र में He_2 बनाने के लिए उपलब्ध चार इलेक्ट्रॉन में से दो σ में रहेंगे और अन्य दो σ* में। क्योंकि σ* ज़्यादा ऊर्जा वाला कक्षक है। इसलिए He_2 नहीं पाया जाता।

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट है कि H_2 व H_2^+ बनना तो संभव है मगर He_2 नहीं बन सकता।

तो संक्षेप में हमने संयोजी बंधन सिद्धांत और आण्विक कक्षक सिद्धांत की चर्चा की। अभी भी कई पक्ष छूट गए हैं। इन दोनों मॉडलों की अपनी-अपनी खूबियां व कमियां हैं। उनकी गहराई में अभी हम नहीं जा रहे हैं। यह भी संभव है कि कई सारी बातें अस्पष्ट रही होंगी। इनकी स्पष्टता के लिए ज़रूरी होगा कि आप अपने मत-विचार लिख भेजें।

$$C^* = 1s^2\ 2s^1\ 2px^1\ 2py^1\ 2pz^1$$

एक इलेक्ट्रॉन की इस उन्नति में 406 किलो जूल प्रति मोल ऊर्जा खर्च होती है। 2s व 2p कक्षकों के इलेक्ट्रॉन का परस्पर सम्मिश्रण (या रेखीय सम्मिश्रण) होता है तथा इन अलग-अलग कक्षकों में से चार परस्पर तुल्य कक्षकों का निर्माण होता है। चूंकि इन नए कक्षकों के निर्माण में 1s तथा 3p कक्षकों का मिश्रण होता है इसलिए इन्हें sp^3 संकरित कक्षक कहते हैं। इस तरह के कई संकरण सम्भव हैं – sp, sp^2, sp^3, dsp^2 d_2sp^3 वगैरह।

इलेक्ट्रॉन को आगे बढ़ाने तथा संकरण में ऊर्जा खर्च होती है यानी परमाणु की ऊर्जा में बढ़ोतरी होती है। मगर इसकी बदौलत जो अतिरिक्त बंधन बनते हैं उनकी वजह से ऊर्जा कम होकर व्यवस्था में स्थायित्व आता है। परन्तु संकरण की प्रेरक शक्ति क्या है, इसे लेकर ज़्यादा कुछ नहीं कहा जा सकता।

सुशील जोशी – पर्यावरण एवं विज्ञान लेखन में सक्रिय। होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से संबद्ध।

बच्चों की भाषा

रश्मि पालीवाल

'हम जैसा सुनते हैं, वैसा बोलते हैं और वैसा ही लिखते हैं? अगर हम हाथी को 'हाँथी', सफेद को 'शफेद', परीक्षा को 'परिक्षा' बोलते हैं तो बच्चों से यह उम्मीद क्यों करते हैं कि वे 'हाँथी' को हाथी लिखें?'

प्राशिका प्रशिक्षण का आखिरी दिन था। कक्षा तीसरी का प्रशिक्षण लेने वाले शिक्षकों के एक समूह से यह चर्चा हो रही थी कि तीसरी में आने वाले बच्चों के साथ भाषा सिखाने में किन बातों पर ध्यान देना होगा, वे किस तरह की गलतियां करते हैं और उन्हें किन बातों में मदद चाहिए होगी?

शिक्षकों ने कहा कि मुख्यतः *व्याकरण* में और *वर्तनी* में मदद करनी होगी।

भाषा शिक्षण का कोई और तीसरा उद्देश्य भी हो सकता है क्या – उपरोक्त दो लक्ष्यों के अलावा?" थोड़ी देर सोचने पर भी मौजूद लोग कोई और लक्ष्य नहीं सोच पाए। "ऐसा कोई लक्ष्य जिस पर हमने तीसरी कक्षा के

प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान भी काफी काम किया है?"

अब भी शिक्षकों के बीच कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

बहरहाल जब मैंने कहा कि अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास भी भाषा शिक्षण का एक लक्ष्य माना जा सकता है — तो सबने तुरन्त अपनी थोड़ी झेंप-युक्त सहमति जताई।

अभिव्यक्ति की क्षमता से क्या आशय है, और उसके बारे में क्या करना चाहिए, ये प्रश्न आज नहीं उठाए और न ही शिक्षकों की तरफ से उठे। आठ दिन के प्रशिक्षण में कम-से-कम इस धारणा से उनका परिचय तो हो ही गया था और वे उसे एक हद तक पहचानने भी लगे थे, हालांकि उनके मन में बने-बैठे उद्‌देश्यों के खाके में इस धारणा ने अभी अपनी जगह नहीं बनाई थी।

सहमति व्यक्त हो जाने पर श्यामपट पर भाषा शिक्षण के तीनों उद्‌देश्य लिख दिए

व्याकरण वर्तनी अभिव्यक्ति

अब हम यह लेखा जोखा लेने बैठे कि इन उद्‌देश्यों के लिए अभी तक शिक्षक क्या कदम उठाते आए हैं तथा किसी प्रकार के नए कदम उन्हें सूझे हैं क्या?

वर्तनी: आमतौर पर गलत वर्तनी को सुधार कर बच्चों से कई बार लिखवाया जाता है। किन्तु, इससे समस्या हल नहीं होती। बहुत से बच्चे फिर भी गलत ही लिखते हैं।

क्या कारण हो सकता है? क्या यह कि हम जैसा सुनते हैं, वैसा बोलते हैं और वैसा ही लिखते हैं? अगर हम हाथी को 'हाँथी', सफेद को 'शफेद', परीक्षा को 'परिक्षा' बोलते हैं तो बच्चों से यह उम्मीद क्यों करते हैं कि वे 'हाँथी' को हाथी लिखें? इसमें बच्चे की गलती है या समाज की गलती है? और जिसे हम समाज की गलती कहने को तैयार हो रहे हैं, वो समाज की <u>गलती</u> है या समाज की <u>रीति</u> है?

एक क्षेत्र के समाज की भाषा की रीति को गलत कहने वाला कौन है? किस समूह द्वारा बोली-लिखी गई भाषा 'सही' भाषा होगी और उसकी तुलना में उच्चारण आदि के सारे अन्तर 'गलतियां' मान लिए जाएंगे, यह एक ऐतिहासिक व राजनैतिक मसला है। इस मसले का समाधान शिक्षक द्वारा छोटे बच्चों पर अत्यधिक दबाव बना कर तो हो भी नहीं सकता।

फिर भी इस संबंध में क्या कुछ और नया किया जा सकता है? उदाहरण के लिए तीसरी के बच्चों को बाल पुस्तकालय की पुस्तकें पढ़ने व देखने का कितना मौका दिया जाता

है? बहुत ही कम स्कूलों में ऐसा कोई प्रयत्न होता है। क्यों न इस ओर अधिक प्रयास करें? पर, अलग-अलग किताबें, खूब सारी किताबें पढ़ने से वर्तनी सुधारने में क्या मदद मिलेगी? शायद यह कि अपेक्षित शब्द रचना को कई बार सहज रुचिपूर्ण ढंग से देखने के साथ-साथ शब्दों की छवि मन मस्तिष्क में बनती-बैठती जाती है। शब्दों के अपेक्षित उदाहरणों से तरह-तरह से परिचित व घनिष्ठ होते रहने से बच्चों को अपेक्षित ढंग से लिखने में भी सकारात्मक सहायता मिलेगी, जबकि सिर्फ अपनी गलत वर्तनी को सुधार कर सैंकड़ों बार नकल करते रहना एक सीमित-सा प्रयास है। हमें कोशिश यह करनी चाहिए कि कई तरह के प्रयास करने के मौके बच्चों को दें।

एक और तरह की कोशिश की जा सकती है, जो आज भी स्कूलों में बहुत कम होती है – वह है ध्वनियों से खेलना। दरअसल वर्तनी द्वारा हम शब्द की ध्वनि को ही तो आकार देते हैं। शब्दों की ध्वनियों के प्रति सजग-सचेत हो जाएं, तो उन ध्वनियों को आकार देने में भी हमारे ज़्यादा सजग-सचेत रहने की संभावना है। तो क्यों न ऐसा करें कि घेरे में बैठकर, मान लीजिए, आपने कहा 'बुन' ... और श्यामपट पर लिख भी दिया 'बुन'... फिर हर बच्चा ऐसी ही मिलती जुलती ध्वनि के शब्द बोले – *गुन* – *सुन* – *धुन* – सार्थक भी और निरर्थक भी, सब चलेगा.... नुन, कुन, जुन ... क्योंकि हमारा आशय तो ध्वनि पकड़ने से है। आप इन सब शब्दों को श्यामपट पर लिखते

जाइए। हर बच्चे को बोलने दीजिए, दो-तीन राउन्ड खिलवाइए जब तक मज़ा और नए उदाहरण, दोनों चुकते नज़र न आएं। वर्तनी सुधारने के प्रयास में यह नया प्रयास भी जोड़ा जा सकता है।

व्याकरण: बच्चों को व्याकरण में क्या कठिनाई आती है? मुख्य रूप से बच्चे ऐसे प्रश्नों के सही उत्तर नहीं दे पाते 'स्त्रीलिंग-पुल्लिंग लिखो', 'एकवचन-बहुवचन लिखो'।

सवाल यह है कि बच्चे जब बोलते-बतियाते हैं तब भी क्या वे गलत व्याकरण बोलते हैं? इस प्रश्न पर सबकी राय थी कि ऐसा तो नहीं था। बोलने में वे लिंग या वचन की गलती नहीं करते। तब, सवाल यह नहीं है कि बच्चों को सही व्याकरण कैसे सिखाएं बल्कि सवाल यह है कि बच्चे भाषा का सही उपयोग जानते हैं कि नहीं, इसका मूल्यांकन कैसे करें? मूल्यांकन दो तरह से किया जा सकता है। एक तो परिभाषाओं के माध्यम से किया जा सकता है – यानी स्त्रीलिंग, पुल्लिग, एकवचन, बहुवचन जैसे पारिभाषिक शब्दों के माध्यम से।

दूसरा तरीका है संदर्भों के माध्यम से मूल्यांकन करना। जैसे, बच्चों से कहें कि नीचे लिखे खाली स्थान भरो:

राम आम खाता है।
लड़के आम – – – – हैं।
दादाजी आम – – – हैं।
आम खाती हैं।
तुम आम – – – हो।
मैं आम – – – हूं।
चूहा आया।
बन्दरिया नाची।
चूहिया – – – ।
– – – नाचा।

या, नीचे लिखे वाक्य सुधारो:

पेड़ पर एक चिड़िया बैठी हैं।
पेड़ पर दो चिड़िया बैठी है।

पूरे वाक्य के संदर्भ में सही बात पकड़ना और व्यक्त करना सहज होता है। तीसरी कक्षा के स्तर पर क्या उपरोक्त प्रकार का अभ्यास और मूल्यांकन काफी नहीं माना जा सकता? पारिभाषिक स्तर पर सोचना एक अमूर्त क्रिया है – इसके लिए, आगे की कक्षाओं का समय है बच्चों के पास।

●

साथ ही यह बात भी ध्यान में रखना ज़रूरी है कि उच्चारण की तरह ही व्याकरण भी बच्चे अपने अपने समाज की रीति के अनुरूप ही सीख लेते हैं। यदि गोंड समाज की भाषा की रचना में स्त्रीलिंग, पुल्लिग का भेद नहीं है तो उस समाज के बच्चों को ऐसा भेद करती हुई भाषा का इस्तेमाल करने में समय लगेगा और शायद कई बच्चे बहुत प्रयास के बाद भी, अपनी भाषा रचना में लिंग भेद न ला पाएं। इसके लिए उन्हें व्याकरण

है? बहुत ही कम स्कूलों में ऐसा कोई प्रयत्न होता है। क्यों न इस ओर अधिक प्रयास करें? पर, अलग-अलग किताबें, खूब सारी किताबें पढ़ने से वर्तनी सुधारने में क्या मदद मिलेगी? शायद यह कि अपेक्षित शब्द रचना को कई बार सहज रुचिपूर्ण ढंग से देखने के साथ-साथ शब्दों की छवि मन मस्तिष्क में बनती-बैठती जाती है। शब्दों के अपेक्षित उदाहरणों से तरह-तरह से परिचित व घनिष्ठ होते रहने से बच्चों को अपेक्षित ढंग से लिखने में भी सकारात्मक सहायता मिलेगी, जबकि सिर्फ अपनी गलत वर्तनी को सुधार कर सैंकड़ों बार नकल करते रहना एक सीमित-सा प्रयास है। हमें कोशिश यह करनी चाहिए कि कई तरह के प्रयास करने के मौके बच्चों को दें।

एक और तरह की कोशिश की जा सकती है, जो आज भी स्कूलों में बहुत कम होती है – वह है ध्वनियों से खेलना। दरअसल वर्तनी द्वारा हम शब्द की ध्वनि को ही तो आकार देते हैं। शब्दों की ध्वनियों के प्रति सजग-सचेत हो जाएं, तो उन ध्वनियों को आकार देने में भी हमारे ज़्यादा सजग-सचेत रहने की संभावना है। तो क्यों न ऐसा करें कि घेरे में बैठकर, मान लीजिए, आपने कहा 'बुन' ... और श्यामपट पर लिख भी दिया 'बुन'... फिर हर बच्चा ऐसी ही मिलती जुलती ध्वनि के शब्द बोले – *गुन* – *सुन* – *धुन* – सार्थक भी और निरर्थक भी, सब चलेगा.... नुन, कुन, जुन ... क्योंकि हमारा आशय तो ध्वनि पकड़ने से है। आप इन सब शब्दों को श्यामपट पर लिखते

जाइए। हर बच्चे को बोलने दीजिए, दो-तीन राउन्ड खिलवाइए जब तक मज़ा और नए उदाहरण, दोनों चुकते नज़र न आएं। वर्तनी सुधारने के प्रयास में यह नया प्रयास भी जोड़ा जा सकता है।

व्याकरण: बच्चों को व्याकरण में क्या कठिनाई आती है? मुख्य रूप से बच्चे ऐसे प्रश्नों के सही उत्तर नहीं दे पाते 'स्त्रीलिंग-पुल्लिंग लिखो', 'एकवचन-बहुवचन लिखो'।

सवाल यह है कि बच्चे जब बोलते-बतियाते हैं तब भी क्या वे गलत व्याकरण बोलते हैं? इस प्रश्न पर सबकी राय थी कि ऐसा तो नहीं था। बोलने में वे लिंग या वचन की गलती नहीं करते। तब, सवाल यह नहीं है कि बच्चों को सही व्याकरण कैसे सिखाएं बल्कि सवाल यह है कि बच्चे भाषा का सही उपयोग जानते हैं कि नहीं, इसका मूल्यांकन कैसे करें? मूल्यांकन दो तरह से किया जा सकता है। एक तो परिभाषाओं के माध्यम से किया जा सकता है – यानी स्त्रीलिंग, पुल्लिग, एकवचन, बहुवचन जैसे पारिभाषिक शब्दों के माध्यम से।

दूसरा तरीका है संदर्भों के माध्यम से मूल्यांकन करना। जैसे, बच्चों से कहें कि नीचे लिखे खाली स्थान भरो:

राम आम खाता है।
लड़के आम – – – – हैं।
दादाजी आम – – – हैं।
– आम खाती हैं।
तुम आम – – – हो।
मैं आम – – – हूं।
चूहा आया।
बन्दरिया नाची।
चूहिया – – – ।
– – – नाचा।

या, नीचे लिखे वाक्य सुधारो:

पेड़ पर एक चिड़िया बैठी हैं।
पेड़ पर दो चिड़िया बैठी है।

पूरे वाक्य के संदर्भ में सही बात पकड़ना और व्यक्त करना सहज होता है। तीसरी कक्षा के स्तर पर क्या उपरोक्त प्रकार का अभ्यास और मूल्यांकन काफी नहीं माना जा सकता? पारिभाषिक स्तर पर सोचना एक अमूर्त क्रिया है – इसके लिए, आगे की कक्षाओं का समय है बच्चों के पास।

●

साथ ही यह बात भी ध्यान में रखना ज़रूरी है कि उच्चारण की तरह ही व्याकरण भी बच्चे अपने अपने समाज की रीति के अनुरूप ही सीख लेते हैं। यदि गोंड समाज की भाषा की रचना में स्त्रीलिंग, पुल्लिग का भेद नहीं है तो उस समाज के बच्चों को ऐसा भेद करती हुई भाषा का इस्तेमाल करने में समय लगेगा और शायद कई बच्चे बहुत प्रयास के बाद भी, अपनी भाषा रचना में लिंग भेद न ला पाएं। इसके लिए उन्हें व्याकरण

के नियम याद करने व अभ्यास करने से जो सीमित सहायता मिलेगी, उससे ज़्यादा सहायता हिन्दी जैसी अपेक्षित भाषा बहुत बार सुनने, बहुत बार पढ़ने से मिलेगी। जिससे वे अपेक्षित भाषा के तौर तरीकों से घनिष्ठ रूप से परिचित हो जाएं। जो भाषा हम बच्चों को सिखाना चाहते हैं, उससे उनका परिचय कैसे बढ़ाया जाए, और गाढ़ा किया जाए, यह हमारे सोचने की उपयुक्त दिशा होनी चाहिए।

अभिव्यक्ति: हमारे बीच असम के कुछ साथी उपस्थित थे। वे हिन्दी बोलने की कोशिश करते थे, जिसमें स्वाभाविक है, उच्चारण और व्याकरण की काफी भिन्नता होती थी। फिर भी वे हिन्दी भाषा का इस्तेमाल कर रहे थे, अपने को अभिव्यक्त करने के लिए। और हम उनकी बात बहुत कुछ समझ भी रहे थे। यानी भाषा का उपयोग आपसी संप्रेषण के लिए सफलतापूर्वक हो रहा था। भाषा की यह भूमिका भाषा शिक्षण के लक्ष्यों में शामिल होनी ही चाहिए। तो सोचिए कि हम अभी कक्षा में अभिव्यक्ति के विकास के लिए क्या करते हैं?

इस प्रश्न पर शिक्षकों ने सोचा और स्वीकार किया कि इस संबंध में वे कुछ खास नहीं करते! क्या कर सकते हैं? बच्चों से तरह-तरह की चीज़ों पर बातचीत कर सकते हैं, उनकी बातें सुन सकते हैं। पर वे अभी खुद ज़्यादा कुछ लिख नहीं सकते – इस स्थिति में बच्चे जो कुछ बोलते बताते जाएं वही सब शब्दशः श्यामपट पर या कॉपी में आप लिखते जा सकते हैं – और फिर उन्हीं का बोला हुआ वृत्तान्त उन्हें पढ़ कर सुना सकते हैं।

बच्चों का बोला हम लिखें? यह सुझाव तो काफी चकित करने वाला था – यह तो पहले कभी सोचा नहीं था। इससे क्या होगा? थोड़ा ठिठकने भर से इस क्रिया का महत्व सब के मन में उतर गया था – इसलिए किसी को भी यह कहने की ज़रूरत महसूस नहीं हुई कि बच्चों की अभिव्यक्ति को प्रोत्साहन, हौंसला और सहायता देने में उपरोक्त सुझाव की कितनी भूमिका होगी।

मूल्यांकन

फिर बात उठी कि भाषा की परीक्षा में बच्चों का मूल्यांकन कैसे करेंगे? किस लक्ष्य के अनुरूप होगा मूल्यांकन? उच्चारण व व्याकरण की शुद्धता और अभिव्यक्ति की क्षमता के लक्ष्य तो एक दूसरे को काटेंगे?

इस बिन्दु पर विचार हुआ और निष्कर्ष कुछ ऐसा निकला कि कुछ प्रश्न अभिव्यक्ति की कुशलता जांचने के लिए निर्धारित किए जाने चाहिए और उन प्रश्नों में वर्तनी-व्याकरण की गलतियों को नज़र-अन्दाज़ करके, अभिव्यक्ति के अनुसार बच्चों को अंक दिए जाने चाहिए।

लंबी चर्चा के अंत में हम सभी को अहसास हो रहा था कि जिस काम से बच्चे आत्मविश्वास और बेझिझकपन पा सकते हैं, दुनिया की बातों को समझ सकते हैं और अपनी बात दुनिया के सामने रख सकते हैं, उसी काम पर स्कूल में ध्यान कम दिया जाता है। और जो बातें बच्चों के बस के बाहर हैं और जिनका दबाव उन्हें भयभीत व कमज़ोर बनाता है, स्कूल में उन्हीं बातों पर ज़ोर अधिक है। भाषा शिक्षा की सामाजिक प्रक्रिया पर विचार करके, उसे समझ के, क्या हम इस असंतुलन को कुछ ठीक कर सकते हैं?

यह बातचीत एकलव्य के प्राथमिक शिक्षण कार्यक्रम के तहत आयोजित शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान की गई।

रश्मि पालीवाल – एकलव्य के सामाजिक अध्ययन शिक्षण कार्यक्रम समूह की सदस्य हैं।

अब इन बहानों का क्या करें

• विष्णुकांत

. . . अब इन्हें सिर्फ बहाने मानें या कि तीक्ष्ण दिमाग की एक निशानी. .

बहाने बनाने की कला भी अनूठी है। न जाने क्यों इसे 'पूरी तरह जान-बूझकर झूठ बोलना' मानने में दिक्कत होती है। विद्यालय के संदर्भ में देखें तो करीब-करीब सारे बच्चे उस कला की प्रेक्टिस करते हैं और अक्सर शिक्षक इस बात को जानता भी है। यदि देखें तो कुछ बहाने बच्चों की तेज़, उर्वर बुद्धि की तीक्ष्णता को दर्शाते हैं तो कुछ घिसी-पिटी घटनाएं दोहराते रहते हैं।

कृष्णपाल (के.पी.) छठवीं का छात्र है। बुद्धि तेज़ पर काम में घोर आलसी। ऊर्जा व जोश तब तक नहीं दिखाता जब तक काम उसके मन का न हो। गृहकार्य शायद ही कभी पूरा किया हो। पूछने पर बहाने तैयार। ऐसे-ऐसे कि आप दांतों तले अंगुली दबा लें।

के.पी. को बहाने दोहराते शायद ही मैंने कभी देखा हो। कभी बिजली नहीं होती, कभी खेलने लगे थे तो कभी पापा की बहन के सौतेले भाई की ससुराल वालों के बगल वाले घर में शादी में चले गए थे; तो कभी सीधे-सीधे, 'याद ही नहीं आया।'

अब याद न आने के लिए आप

क्या करेंगे? कोई जान बूझकर तो भूला नहीं? 'फिर तुम होमवर्क लिखकर क्यों नहीं ले जाते?,' 'भूल जाता हूं?'

जब मैंने ध्यान देकर लिखवाया तो दूसरे दिन, 'होमवर्क को देखना ही भूल गया।' कहते भी इतनी मासूमियत के साथ हैं कि पत्थर का दिल भी पिघल जाए। यदि आप नाराज़गी दिखाते हैं तो 'कल से कर के लाऊंगा।'

और कल, फिर वही इतिहास।

'क्यों नहीं किया?'

'सर, थोड़ा-सा बाकी है।'

कॉपी खोल के देखा तो दो पेज की जगह महोदय ने दो शब्द ही लिखे हैं।

'क्यों नहीं किया?'

'सर, कर रहा था पर स्कूल बस आ गई,' सिर खुजाते बोले।

'हूं, तो तुमने पहले क्यों नहीं किया?'

'पहले सोच रहा था।' (सोचने की गंभीर मुद्रा)। 'अच्छा, कितनी देर लगती है सोचने में?'

'एक घण्टा।'

'हूं, तुमने कब सोचना शुरू किया?'

'सुबह साढ़े आठ बजे।'

'उसके पहले क्यों नहीं?'

'पहले याद ही नहीं आया। सुबह याद आया।'

'अच्छा....फिर...?'

'साढ़े नौं बजे तक सोचा। फिर कॉपी खोली, लिखने बैठा तो पेंसिल टूटी थी, बनाने लगा। फिर लिखने लगा लेकिन तब तक गाड़ी आ गई।'

हर पल का व्यवस्थित ब्यौरा। बेचारा शिक्षक!

कल्पना की कुलांचे भरने में दूसरी कक्षा का भूपेन्द्र भी कम नहीं। बैठे-बैठे पढ़ता रहता है और अपनी कल्पना के घोड़े दौड़ाता रहता है। समझदार है पर बहुत जल्दी नाराज़ हो जाता है।

एक दिन होमवर्क करके नहीं लाया। मैंने कारण पूछा।

'सर, बात यह है कि मैंने रात में एक सपना देखा कि मैं उठकर सारा काम कर रहा हूं। आपका काम भी ठीक से किया। सुबह मुझे लगा कि अब क्या करना, होमवर्क का सारा काम तो पूरा हो गया है। अभी कॉपी खोली तो देखा कि काम नहीं हुआ। तो वो मैंने सपना देखा था।'

क्या ऐसे कल्पनाशील और उर्वर दिमाग सही दिशा में लगाए जा सकते हैं? अगर हम कमियों को स्वीकार कर अपने तरीके लगातार सुधारते रहें, बिना मूढ़ व उबाऊ बने, तभी शायद यह संभव है।

विष्णुकांत — फेबइंडिया विद्यालय, बाली, ज़िला पाली, राजस्थान में अध्यापक।

एक शाम एक जादूगर के साथ

जे. बी. एस. हाल्डेन
अनुवादः पुष्पा अग्रवाल

मैंने अपने जीवन में ही अजीबो गरीब भोजन किए हैं। अगर मैं चाहूं तो आपको एक खदान में किए गए भोजन या मॉस्को के एक भोजन या फिर एक करोड़पति के साथ किए गए भोजन के बारे में बता सकता हूं। लेकिन मुझे लगता है कि आप मेरे उस भोजन के बारे में जानने को ज़्यादा उत्सुक होंगे जो मैंने एक जादूगर के साथ किया था, क्योंकि ये अन्य दावतों से बिल्कुल अलग है। आमतौर पर लोग इस तरह का भोजन नहीं करते क्योंकि एक तो इंग्लैंड में ज़्यादा जादूगर हैं ही नहीं और दूसरे, कि बहुत कम लोग ही जादूगरों से परिचित होते हैं। मैं एक असली जादूगर की बात कर रहा हूं।

नहीं कर पाएगा, जैसा कि बाज़ीगर खरगोश के साथ कर लेते हैं।

जब पहली बार मैं मिस्टर लीकी से मिला तो सोच भी नहीं सकता था कि वो जादूगर होंगे। हुआ यूं कि एक दिन शाम पांच बजे के करीब बाज़ार से लौटते हुए मैं एक बिजली के खम्बे के पास रुका, इसी बीच मेरे पीछे-पीछे चल रहा एक छोटा-सा आदमी आगे बढ़ गया। अचानक उसने एक बस को आते देखा और बचने के लिए वो पीछे की ओर कूदा लेकिन इसी चक्कर में वो एक कार के सामने आ गया। और अगर मैंने कोट का कॉलर पकड़ कर उसे वापस खींच नहीं लिया होता तो कार ने उसे टक्कर मार दी होती। क्योंकि बरसात का मौसम था

एक शाम एक जादूगर के साथ

जे. बी. एस. हाल्डेन
अनुवादः पुष्पा अग्रवाल

. . . उन्होंने अपने कानों को थपथपाया – लगा जैसे ताली बज रही हो। कोने में तांबे का जो बड़ा-सा बर्तन रखा था उसमें से कुछ निकला। मुझे लगा कि एक बड़ा-सा सांप है। लेकिन जब गौर किया तो उसके एक तरफ छोटे-छोटे चूसक थे – तो यह ऑक्टोपस की एक भुजा थी। इस भुजा ने एक अलमारी खोली और एक बड़ा-सा तौलिया निकाला, अब तक उसकी दूसरी भुजा भी बाहर आ चुकी थी जिसे उसने तौलिए से पोंछा। अब सूखी भुजा चूसकों की मदद से दीवार पर चिपक गई, और धीरे-धीरे पूरा जानवर बाहर आ गया।

मैंने अपने जीवन में कुछ बहुत ही अजीबो गरीब भोजन किए हैं। अगर मैं चाहूं तो आपको एक खदान में किए गए भोजन या मॉस्को के एक भोजन या फिर एक करोड़पति के साथ किए गए भोजन के बारे में बता सकता हूं। लेकिन मुझे लगता है कि आप मेरे उस भोजन के बारे में जानने को ज़्यादा उत्सुक होंगे जो मैंने एक जादूगर के साथ किया था, क्योंकि ये अन्य दावतों से बिल्कुल अलग है। आमतौर पर लोग इस तरह का भोजन नहीं करते क्योंकि एक तो इंग्लैंड में ज़्यादा जादूगर हैं ही नहीं और दूसरे, कि बहुत कम लोग ही जादूगरों से परिचित होते हैं। मैं एक असली जादूगर की बात कर रहा हूं।

कुछ बाज़ीगर अपने को जादूगर कहते हैं। वे बहुत चालाक होते हैं लेकिन वे उस तरह के काम नहीं कर सकते जैसे असली जादूगर करते हैं। मेरा कहने का मतलब यह है कि वो खरगोश को एक मछलियों के बरतन में बदल सकते हैं लेकिन ऐसा वो किसी आड़ में या किसी चीज़ के नीचे करते हैं और आपको पता नहीं चल पाता कि वास्तव में क्या हो रहा है। लेकिन एक असली जादूगर आपकी आंखों के सामने ही एक गाय को दीवार-घड़ी में बदल सकता है। लेकिन यह मुश्किल काम है और कोई भी दिन में दो बार, हफ्ते में छः दिन यह नहीं कर पाएगा, जैसा कि बाज़ीगर खरगोश के साथ कर लेते हैं।

जब पहली बार मैं मिस्टर लीकी से मिला तो सोच भी नहीं सकता था कि वो जादूगर होंगे। हुआ यूं कि एक दिन शाम पांच बजे के करीब बाज़ार से लौटते हुए मैं एक बिजली के खम्बे के पास रुका, इसी बीच मेरे पीछे-पीछे चल रहा एक छोटा-सा आदमी आगे बढ़ गया। अचानक उसने एक बस को आते देखा और बचने के लिए वो पीछे की ओर कूदा लेकिन इसी चक्कर में वो एक कार के सामने आ गया। और अगर मैंने कोट का कॉलर पकड़ कर उसे वापस खींच नहीं लिया होता तो कार ने उसे टक्कर मार दी होती। क्योंकि बरसात का मौसम था और सड़क भीगी थी, ड्राइवर के ब्रेक लगाने पर भी कार रुकी नहीं, आगे की ओर थोड़ा-सा फिसल ही गई।

वह छोटा आदमी मेरा बहुत अहसानमन्द हो रहा था। लेकिन इन घटनाओं से वह इतना घबरा गया था कि मैंने हाथ पकड़कर उसे सड़क पार कराई और उसे उसके घर तक पहुंचाया जो कि पास में ही था। अब मैं आपको यह नहीं बताऊंगा कि उसका घर कहां है क्योंकि हो सकता है कि आप जाकर उसको परेशान करें और अगर वो चिढ़ गया तो यह भी हो सकता है कि आपके लिए कोई परेशानी खड़ी हो जाए। मेरा मतलब है कि वो आपका

एक शाम एक जादूगर के साथ

जे. बी. एस. हाल्डेन
अनुवाद: पुष्पा अग्रवाल

...उन्होंने अपने कानों को थपथपाया – लगा जैसे ताली बज रही हो। कोने में तांबे का जो बड़ा-सा बर्तन रखा था उसमें से कुछ निकला। मुझे लगा कि एक बड़ा-सा सांप है। लेकिन जब गौर किया तो उसके एक तरफ छोटे-छोटे चूसक थे – तो यह ऑक्टोपस की एक भुजा थी। इस भुजा ने एक अलमारी खोली और एक बड़ा-सा तौलिया निकाला, अब तक उसकी दूसरी भुजा भी बाहर आ चुकी थी जिसे उसने तौलिए से पोंछा। अब सूखी भुजा चूसकों की मदद से दीवार पर चिपक गई, और धीरे-धीरे पूरा जानवर बाहर आ गया।

मैंने अपने जीवन में कुछ बहुत ही अजीबो गरीब भोजन किए हैं। अगर मैं चाहूं तो आपको एक खदान में किए गए भोजन या मॉस्को के एक भोजन या फिर एक करोड़पति के साथ किए गए भोजन के बारे में बता सकता हूं। लेकिन मुझे लगता है कि आप मेरे उस भोजन के बारे में जानने को ज़्यादा उत्सुक होंगे जो मैंने एक जादूगर के साथ किया था, क्योंकि ये अन्य दावतों से बिल्कुल अलग है। आमतौर पर लोग इस तरह का भोजन नहीं करते क्योंकि एक तो इंग्लैंड में ज़्यादा जादूगर हैं ही नहीं और दूसरे, कि बहुत कम लोग ही जादूगरों से परिचित होते हैं। मैं एक असली जादूगर की बात कर रहा हूं।

कुछ बाज़ीगर अपने को जादूगर कहते हैं। वे बहुत चालाक होते हैं लेकिन वे उस तरह के काम नहीं कर सकते जैसे असली जादूगर करते हैं। मेरा कहने का मतलब यह है कि वो खरगोश को एक मछलियों के बरतन में बदल सकते हैं लेकिन ऐसा वो किसी आड़ में या किसी चीज़ के नीचे करते हैं और आपको पता नहीं चल पाता कि वास्तव में क्या हो रहा है। लेकिन एक असली जादूगर आपकी आंखों के सामने ही एक गाय को दीवार-घड़ी में बदल सकता है। लेकिन यह मुश्किल काम है और कोई भी दिन में दो बार, हफ्ते में छः दिन यह नहीं कर पाएगा, जैसा कि बाज़ीगर खरगोश के साथ कर लेते हैं।

जब पहली बार मैं मिस्टर लीकी से मिला तो सोच भी नहीं सकता था कि वो जादूगर होंगे। हुआ यूं कि एक दिन शाम पांच बजे के करीब बाज़ार से लौटते हुए मैं एक बिजली के खम्बे के पास रुका, इसी बीच मेरे पीछे-पीछे चल रहा एक छोटा-सा आदमी आगे बढ़ गया। अचानक उसने एक बस को आते देखा और बचने के लिए वो पीछे की ओर कूदा लेकिन इसी चक्कर में वो एक कार के सामने आ गया। और अगर मैंने कोट का कॉलर पकड़ कर उसे वापस खींच नहीं लिया होता तो कार ने उसे टक्कर मार दी होती। क्योंकि बरसात का मौसम था और सड़क भीगी थी, ड्राइवर के ब्रेक लगाने पर भी कार रुकी नहीं, आगे की ओर थोड़ा-सा फिसल ही गई।

वह छोटा आदमी मेरा बहुत अहसानमन्द हो रहा था। लेकिन इन घटनाओं से वह इतना घबरा गया था कि मैंने हाथ पकड़कर उसे सड़क पार कराई और उसे उसके घर तक पहुंचाया जो कि पास में ही था। अब मैं आपको यह नहीं बताऊंगा कि उसका घर कहां है क्योंकि हो सकता है कि आप जाकर उसको परेशान करें और अगर वो चिढ़ गया तो यह भी हो सकता है कि आपके लिए कोई परेशानी खड़ी हो जाए। मेरा मतलब है कि वो आपका

एक कान, हाथी के कान के बराबर कर सकता है या आपके बाल हरे रंग के कर सकता है, या हो सकता है दाएं और बाएं पैर को आपस में बदल दे, या ऐसा ही कुछ और — और फिर ऐसे में आप जहां भी जाएंगे लोग आपका मज़ाक उड़ाएंगे।

उसने कहा, "यह ट्रैफिक मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है, मोटर-बसों से तो मैं डर जाता हूं। अगर मेरा काम लंदन में नहीं होता तो मैं किसी ऐसे छोटे-से द्वीप पर रहता जहां सड़कें होती ही नहीं या फिर किसी पहाड़ की चोटी पर रहता, नहीं तो ऐसी ही किसी और जगह। उस छोटे आदमी को पूरा विश्वास था कि मैंने ही उसका जीवन बचाया है। इसीलिए उसने आग्रह किया कि मैं उसके साथ रात का खाना खाऊं। मैंने कहा कि मैं बुधवार को खाने पर आऊंगा। उस समय तो मुझे उसके बारे में कुछ भी विचित्र नहीं लगा सिवाय इसके कि उसके कान कुछ बड़े थे और दोनों कानों पर बालों का एक-एक गुच्छा था। मुझे याद है कि इस बारे में मैंने सोचा था अगर मेरे कान पर वैसे बाल होते तो मैं उन्हें काट देता। उसने बताया था कि उसका नाम लीकी है और वो पहली मंज़िल पर रहता है।

खैर, मैं बुधवार को उसके घर पहुंचा, सीढ़ियों से ऊपर चढ़कर एक सामान्य से दिख रहे दरवाज़े को खटखटाया। पहले वाला कमरा बिल्कुल साधारण था, लेकिन जब घर के अन्दर पहुंचा तो दूसरा वाला कमरा बहुत ही विचित्र था, दीवारों पर सब तरफ परदे पड़े हुए थे। इन परदों पर आदमियों और जानवरों के चित्र बने हुए थे। वहां एक तस्वीर टंगी थी जिसमें दो लोग एक मकान बनाते दिख रहे थे, इसी तरह दूसरी तस्वीर में एक आदमी कुत्ते को लिए हुए था और धनुष से खरगोशों का शिकार कर रहा था। जब मैंने इन तस्वीरों को छू कर देखा तो मालूम पड़ा कि ये कढ़ी हुई थीं। पर मज़ेदार बात यह थी कि ये तस्वीरें लगातार बदलती रहती थीं। जब तक आप देखते रहते तस्वीर स्थिर रहती। लेकिन इसी बीच अगर आप इधर-उधर देखने लगे और दुबारा उसी तस्वीर पर नज़र डालें तो वह बदली हुई मिलती। खाना खाने के दौरान मकान बनाने वालों ने मकाम की एक मंज़िल और बना ली थी, शिकारी ने अपने धनुष से एक चिड़िया का शिकार कर लिया और कुत्ते ने दो खरगोश पकड़ लिए थे।

शुरू में तो मुझे समझ ही नहीं आया कि कमरे में रोशनी कहां से आ रही है। इसी बीच मैंने गमलों में लगे हुए कुछ पौधे देखे — रोशनी वहीं से आ रही थी। इतने विचित्र पौधे मैंने पहले कभी नहीं देखे थे। उनमें टमाटर जितने बड़े लाल, पीले, नीले रंगों के

चमकते हुए फल लगे थे। वे कोई नए प्रकार के बिजली के बल्ब नहीं थे। मैंने उनमें से एक को छूकर देखा। वह बेहद ठंडा और फल की तरह मुलायम था।

हां, तो मिस्टर लीकी ने पूछा, 'आप क्या खाना पसन्द करेंगे।' मैंने कहा, 'जो भी तैयार हो।' उसने कहा, 'आप जो भी पसन्द करते हों बताएं, अच्छा ये बताइए कि कौन-सा सूप लेंगे?' मैंने कहा, 'बॉश, क्रीम डाल के (ये रूसी सूप है)। मुझे लगा यह आदमी ज़रूर होटल से खाना मंगाता होगा।

'ठीक है, मैं तैयार कर लूंगा,' उसने कहा, 'लेकिन अगर हमारा खाना उसी तरह परोसा जाए जिस तरह रोज़ परोसा जाता है तो आप बुरा तो नहीं मानेंगे? और हां, आप आसानी से डर तो नहीं जाते?'

मैंने कहा, 'बहुत आसानी से तो नहीं।' लीकी ने कहा, 'तो ठीक है मैं अपने नौकर को बुलाता हूं, लेकिन आपको आगाह किए देता हूं कि वो बहुत ही बेढंगा है।'

यह कहते हुए उन्होंने अपने कानों को थपथपाया – लगा जैसे ताली बज रही हो। कोने में तांबे का जो बड़ा-सा बर्तन रखा था उसमें से कुछ निकला। मुझे लगा कि एक बड़ा-सा सांप है। लेकिन जब गौर किया तो उसके एक तरफ छोटे-छोटे चूसक थे – तो यह
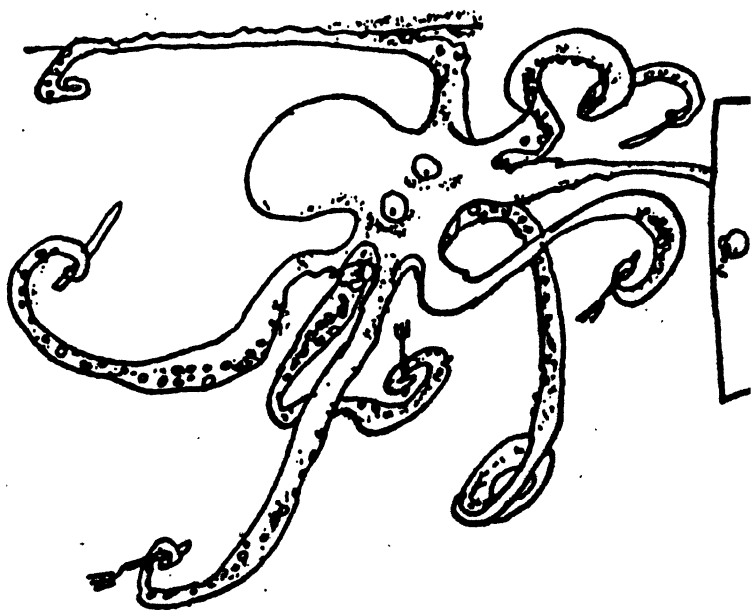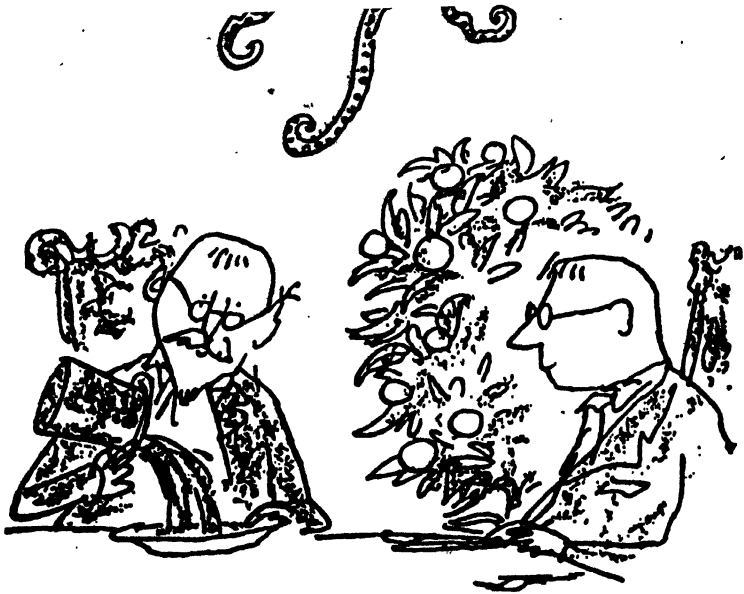
ऑक्टोपस की एक भुजा थी। इस भुजा ने एक अलमारी खोली और एक बड़ा-सा तौलिया निकाला, अब तक उसकी दूसरी भुजा भी बाहर आ चुकी थी जिसे उसने तौलिए से पोंछा। अब सूखी भुजा चूसकों की मदद से दीवार पर चिपक गई, और धीरे-धीरे पूरा जानवर बाहर आ गया। उसने अपने को सुखाया और दीवार पर रेंगने लगा।

इतना बड़ा ऑक्टोपस मैंने पहले कभी नहीं देखा था। उसका शरीर एक बोरे के बराबर था और एक-एक भुजा करीब आठ फुट लम्बी थी। वह दीवार के साथ रेंगता हुआ छत पर जा पहुंचा। जब वह मेज़ के ऊपर पहुंच गया तो एक भुजा से तो उसने छत को पकड़े रखा और बाकी की सात भुजाओं से अलमारी में से प्लेटें, कांटे, छुरियां आदि निकाल कर मेज़ पर सजा दी।

मिस्टर लीकी ने बताया, 'यह मेरा नौकर ऑलिवर है। यह एक आदमी से कहीं बेहतर है, क्योंकि काम करने के लिए इसके बहुत से हाथ हैं और एक प्लेट को लगभग दस चूसकों से उठाता है इसलिए वह कभी गिर कर टूट नहीं सकती।'

मेज़ लगाने के बाद ऑलिवर ने सात अलग-अलग तरह के पेय-पदार्थ पेश किए। पानी, नींबू शर्बत, बियर और चार किस्म की वाइन। उसके सात हाथों

में सात तरह की बोतलें थीं। मैंने पानी लिया।

यह सबकुछ इतना विचित्र था कि इस बात की तरफ मेरा ध्यान ही नहीं गया कि मेरे मेज़बान ने बड़ा-सा हैट पहन रखा है, लेकिन जब उन्होंने उसे सिर से उतारा और उसमें से दो प्लेटों में सूप उड़ेला तो मैं चकित रह गया।

'अरे! हमें थोड़ी-सी क्रीम भी चाहिए,' उन्होंने कहा और आवाज़ दी, 'फिलिस आओ,' और खरगोश के घर जैसे एक डिब्बे में से एक छोटी-सी हरे रंग की गाय भागती हुई आई और कूदकर मेज़ पर चढ़ गई और उनके सामने खड़ी हो गई। ऑलिवर ने उन्हें एक जग दिया और मि. लीकी ने दूध दुहने की तरह उस गाय में से क्रीम दुह कर निकाली। क्रीम बहुत ही बढ़िया थी, मुझे सूप भी बहुत पसंद आया।

'अब आप क्या लेंगे?' मि. लीकी ने पूछा। 'जो आप चाहें,' मैंने उत्तर दिया। वे बोले, 'ठीक है हम भुनी हुई मछली लेंगे और उसके बाद टर्की (एक तरह का पक्षी)।' 'ऑलिवर एक मछली पकड़ो और पॉम्पी उसे भूनो,' उन्होंने कहा।

ऑलिवर ने मछली पकड़ने का कांटा निकाला और उसे मछली पकड़ने के अंदाज़ में अपने एक हाथ से हिलाने लगा। तभी मैंने अलाव में कुछ शोर-सा सुना और देखा कि उसमें से पॉम्पी बाहर आ रहा है। पॉम्पी एक छोटा-सा ड्रेगन था, करीब एक फुट लंबा और एक फुट की ही उसकी दुम थी। अलाव से बाहर निकलने से पहले वह दहकते कोयलों पर लेटा हुआ था इसलिए लाल सुर्ख हो रहा था। मुझे यह देखकर बड़ा मज़ा आया कि पॉम्पी ने बाहर आकर वहां रखे ऐसबेस्टॉस के छोटे-छोटे जूते पहन लिए।

मि. लीकी ने कहा, 'पॉम्पी अपनी दुम ठीक से ऊपर उठा लो, अगर तुमने फिर से कालीन जलाया तो मैं एक बाल्टी ठंडा पानी तुम्हारे ऊपर उड़ेल दूंगा।' साथ ही बहुत धीमे से ये भी कहा, 'मैं ऐसा कभी नहीं करूंगा क्योंकि एक छोटे-से ड्रेगन पर ठंडा पानी डालना बहुत क्रूर काम है।' इसे सिर्फ मैं ही सुन सका। लेकिन बेचारा पॉम्पी – उसने इस धमकी को गंभीरता से लिया, उसकी नाक से निकलने वाली पीली लपटें हल्की नीली हो गईं, उसने दुम को ऊपर उठा लिया और पीछे के पैरों पर धीरे-धीरे चलने लगा। मुझे लगा कि जूतों की वजह से उसे चलने में दिक्कत हो रही है, लेकिन उनकी वजह से कालीन बच गया था। ड्रेगन चारों पैरों पर ही चलते हैं और कभी जूते नहीं पहनते, इसलिए पॉम्पी को इस तरह चलते देखकर मुझे बड़ा ताज्जुब हो रहा था।

मैं पॉम्पी में ही इतना मगन हो चुका था कि देख ही नहीं पाया कि ऑलिवर ने मछली कैसे पकड़ी। और

में चला गया।

मि. लीकी ने कहा 'अगर ड्रेगन का मेरे लिए कोई उपयोग नहीं होता तो मैं उसे रख ही नहीं सकता था। पिछले सप्ताह मैंने इसकी सांस की सहायता से, दरवाज़ों का पुराना पेन्ट जलाया। इसकी दुम टांका लगाने का काम भी देती है, और फिर चोर डाकुओं के मामले में तो यह कुत्ते से भी ज़्यादा भरोसेमंद है। कुत्ते को तो चोर गोली मार सकते हैं — लेकिन गोली जैसे ही पॉम्पी को छुएगी पिघल जाएगी। मैं तो सोचता हूं कि ड्रेगन सिर्फ सजाने के लिए नहीं है, उनका उपयोग भी करना चाहिए। तुम क्या सोचते हो?'

मैंने कहा, 'मुझे तो बताते हुए भी शर्म आ रही है कि मैं पहली बार किसी जीवित ड्रेगन को देख रहा हूं।'

मि. लीकी बोले, 'मैं भी कैसा बुद्धू हूं, ये तो भूल ही गया था कि अधिकतर तो मेरे पास इस पेशे से जुड़े हुए लोग ही आते हैं और तुम एक सामान्य व्यक्ति हो।' इसी बीच उन्होंने अपने हैट में से चटनी, मछली पर उड़ेली, साथ ही बोलते भी गए, 'मैं नहीं कह

जब मैंने दुबारा ऑलिवर की ओर देखा तब तक वह मछली को साफ कर चुका था, इसके बाद मछली को उसने पॉम्पी की ओर फेंका। पॉम्पी ने आगे के पंजों से उसे पकड़ा, फिर बारी-बारी से दोनों हाथों में लेने लगा। उसके हाथों में पंजे जैसी लंबी-लंबी पतली अंगुलियां थीं। जब उसके एक हाथ में मछली होती तो वह दूसरे हाथ को सीने पर रखकर गर्म करता था। जब मछली भुन गई तो पॉम्पी ने उसे ऑलिवर की दी हुई प्लेट में रख दिया। अब तक पॉम्पी को ठंड लगने लगी थी और उसके दांत बज रहे थे। मछली रखते ही वह लपक कर अलाव

सकता कि तुमने इस भोजन में कोई विचित्र बात देखी है या नहीं वैसे कुछ लोगों की निरीक्षण करने की शक्ति दूसरों से ज़्यादा होती है।'

मैंने जवाब दिया, 'ऐसी चीज़ मैंने पहले कभी नहीं देखी।' इस वक्त भी मैं एक इन्द्रधनुषी गुबरैले को देख रहा था जो कमर पर नमक दानी बांधे मेरी तरफ आ रहा था।

मेरे मेज़बान ने कहा – ठीक है,
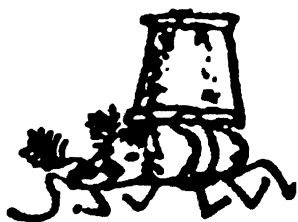
वैसे अब तक तो आप समझ ही गए होंगे कि मैं एक जादूगर हूं। पॉम्पी तो असली ड्रेगन है लेकिन बाकी जो दूसरे जानवर हैं, ये सब आदमी थे। मैंने ही उन्हें ऐसा बना दिया। मिसाल के तौर पर ऑलिवर एक आदमी था। उसके पैर एक ट्रेन से कट गए थे। मेरा जादू मशीनों पर नहीं चलता इसलिए मैं उसके पैर नहीं जोड़ सकता था। और खून बहने से वो मर जाता, इसलिए मैंने सोचा कि इसकी जान बचाने का सिर्फ एक ही तरीका है कि इसे ऐसे जानवर में बदल दिया जाए जिसके पैर ही न हों। इसलिए इसे एक घोंघा बना दिया और जेब में रखकर घर आ गया।

शुरूआत में तो मैंने इसे कुत्ता आदि जैसे दूसरे जानवरों में बदलना चाहा लेकिन उसके पीछे के पैर गायब होते। ऑक्टोपस के पैर नहीं होते, आठों भुजाएं उसके सिर से निकलती हैं, इसलिए जब इसे ऑक्टोपस बनाया तो वह ठीक हो गया। वह पहले वेटर रह चुका था इसलिए यहां भी जल्दी ही अपने काम में दक्ष हो गया। मुझे लगता है कि यह नौकर से कहीं बेहतर है। एक तो यह ऊपर से ही प्लेटें उठा लेता है, दूसरे पीछे खड़े होकर सिर पर सवार नहीं रहता। 'ऑलिवर तुम बची हुई बाकी मछली और एक बोतल बियर ले लेना – मैं तुम्हारी पसन्द जानता हूं।' वह बोले।

ऑलिवर ने एक हाथ से मछली को पकड़कर एक बड़ी-सी चोंच में रख लिया। यह चोंच थी तो तोते जैसी – पर आकार में उससे बहुत बड़ी। यह उसकी आठों भुजाओं के बीच में थी। उसने अलमारी में से एक बियर की बोतल निकाली और चोंच से उसका ढक्कन खोला, फिर अपनी दो भुजाओं की मदद से वह छत पर इस तरह घूम गया कि मुंह से लगी बोतल ऊपर की ओर हो जाए। इस तरह बियर पीने के दौरान ही उसने अपनी बड़ी-सी आंख

को झपकाया भी। अब मैं निश्चित हो गया कि ऑलिवर सही में आदमी रहा होगा क्योंकि किसी ऑक्टोपस को पलक झपकाते मैंने पहले कभी नहीं देखा था। बाकी सभी व्यंजनों के मुकाबले टर्की कुछ सीधे तरीके से आया लेकिन इसके तुरन्त बाद उस शाम का

हादसा हो गया। वो जो गुबरैला नमकदानी लिए आ रहा था, मेज़पोश की एक सलवट पर लुढ़क गया और सारा नमक बिल्कुल मिस्टर लीकी के सामने ही गिर गया।

उन्होंने गुस्से से उसे डांटा, 'लियोपोल्ड, तुम्हारी खुशकिस्मती है कि मैं एक समझदार आदमी हूं। अगर अन्धविश्वासी होता तो सोचता कि यह मेरे लिए अपशकुन का संकेत है। लेकिन अब तुम्हारा दुर्भाग्य आने वाला है। मैं तो सोच रहा था कि तुम्हें फिर से आदमी बना दूंगा लेकिन अगर मैंने तुम्हें आदमी बनाया तो सीधे पुलिस स्टेशन भेज दूंगा। वहां पुलिस वाले तुमसे पूछेंगे कि तुम अब तक कहां छिपे थे? तुम क्या समझते हो कि वे विश्वास कर लेंगे — जब तुम बताओगे कि तुम एक गुबरैला बने हुए थे? क्या तुम्हें अपनी इस हरकत का अफसोस है?'

बहुत मुश्किल से लियोपोल्ड अपने बंधन से निकला और अपनी कमर पर घूम कर अपने पैर हवा में ऐसे हिलाने लगा जैसा कि एक कुत्ता शर्म आने पर करता है।

मिस्टर लीकी ने मुझे बताया कि जब लियोपोल्ड आदमी था तो लोगों को धोखा देकर पैसा बनाया करता था। जब पुलिस को खबर मिली और वे इसे गिरफ्तार करने आ रहे थे तब यह मदद मांगने, मेरे पास आया। मैंने इसे बताया कि अगर पुलिस तुम्हें पकड़ लेती है तो सीधे सात साल की सज़ा होगी। लेकिन तुम चाहो तो पांच साल के लिए मैं तुम्हें एक गुबरैला बना सकता हूं। इस बीच अगर तुम्हारा व्यवहार अच्छा रहा तो तुम्हारी शक्ल बदल कर तुम्हें आदमी बना दूंगा

जिससे कोई तुम्हें पहचान नहीं सकेगा। इसीलिए लियोपोल्ड आज गुबरैला है। लगता है लियोपोल्ड को नमक गिराने का अफसोस है। 'लियोपोल्ड तुमने जो नमक गिराया है, सारा-का-सारा उठाओ।'

जब हम टर्की खत्म कर रहे थे उसी दौरान मि. लीकी बेचैनी से बार-बार ऊपर की ओर देख रहे थे। उन्होंने कहा, 'मुझे उम्मीद है कि अब्दुल मक्कर स्ट्रॉबेरियां लाने में देरी नहीं करेगा।' 'स्ट्रॉबेरियां! और वो भी जनवरी में!' मैंने आश्चर्य से कहा।

मि. लीकी ने कहा, 'हां, अब्दुल मक्कर एक जिन्न है और उसे मैंने स्ट्रॉबेरियां लाने न्यूज़ीलैंड भेजा है, वहां इस समय गर्मी का मौसम होगा। उसे ज़्यादा देर नहीं करनी चाहिए। लेकिन हम लोगों की तरह जिन्नों की भी कमज़ोरियां होती हैं। जब उन्हें किसी काम के लिए भेजा जाता है तो वे बहुत ऊंचाई पर उड़ते हुए जाते हैं। वे जन्नत के इतना नज़दीक जाना चाहते हैं कि फरिश्तों की बातें सुन सकें, और तब फरिश्ते उन पर अग्नि बाण फेंकते हैं। और होता यह है कि वे अपना सामान गिरा देते हैं या आधे झुलसे हुए घर वापस आते हैं। अब्दुल मक्कर को गए एक घंटे से अधिक बीत चुका है। उसे जल्दी ही वापस आना चाहिए, चलिए इस बीच हम कोई और फल ले लेते हैं।'

मि. लीकी उठे और मेज़ के चारों कोनों को उन्होंने अपनी छड़ी से छुआ। हर कोने की लकड़ी फूल गई, और फिर चटक गई। उसमें से छोटा-सा एक हरा अंकुर निकला और तेज़ी से बड़ा होने लगा। सिर्फ एक मिनट में पौधे एक फुट ऊंचे हो गए, उनका तना मोटा हो गया और उनमें काफी सारी पत्तियां आ गईं। पत्तियों को देखकर मैं बता सकता था कि एक पेड़ चेरी का है, दूसरा आड़ू का और तीसरा नाशपाती का। लेकिन चौथे को मैं नहीं पहचान सका।

इसी दौरान जबकि ऑलिवर अपने चार हाथों से मेज़ साफ कर रहा था और पांचवें से एक व्यंजन खा रहा था — तभी अब्दुल मक्कर अंदर आया। वो छत में से दाखिल हुआ। पहले उसके पैर आए और लगा जैसे छत बन्द हो गई है। फिर छत थोड़ी-सी हिली और वो ऑलिवर की एक भुजा से टकराते-टकराते बचता हुआ फर्श पर आ खड़ा हुआ। उसने मिस्टर लीकी को प्रणाम किया और कहा, 'आपका गुलाम आपके लिए दुर्लभ ताज़े फल लाया है।'

उसका रंग भूरा था, नाक कुछ लम्बी थी। वह काफी कुछ आदमी जैसा लग रहा था, सिवाय इसके कि उसके नाखून सुनहरी थे और पीठ पर उड़ने वाले पंख थे। उसने रेशमी कपड़े पहन रखे थे जिनका रंग हरा था।

मि. लीकी ने जवाब दिया, 'मैं तुम्हारा बहुत आभारी हूं। अब तुम जा सकते हो। लेकिन ठहरो, पहले मेरे लिए मॉन्ट्रियल से ब्लेड ला दो। लंदन में अब तक दुकाने बंद हो चुकी हैं लेकिन मॉन्ट्रियल में तो अभी दोपहर ही होगी।' अब्दुल मक्कर ने कहा, 'हुजूर नीचे का आकाश हवाई जहाजों से भरा हुआ है जो जादुई कालीन से भी तेज़ उड़ते हैं और ऊपर की ओर बहुत से आकाशीय पिंड तैर रहे होंगे।' मि. लीकी ने कहा, 'तो तुम पांच मील की ऊंचाई पर उड़ कर जाना और दोनों खतरों से बचना। अब तुम जाओ।'

जिन्न गायब हो गया। उसने इस बार फर्श से जाना बेहतर समझा। इसी बीच पेड़ चार फीट ऊंचे हो गए थे। उन में फूल भी लग गए थे, फूल झड़ रहे थे और छोटे-छोटे हरे फल लगने लगे थे।

मि. लीकी ने कहा — अब्दुल मक्कर से मैंने तुम्हारा परिचय नहीं कराया। आशा है तुमने बुरा नहीं माना होगा। बात यह है कि जिन्न कभी-कभी बड़े बेढंगे हो जाते हैं। हालांकि अब्दुल मक्कर अच्छा जिन्न है फिर भी अगर तुम उसे वापस भेजने का मंत्र नहीं जानते हो तो वह तुम्हारे लिए बड़ी विचित्र स्थिति पैदा कर सकता है, जैसे कि अगर तुम क्रिकेट खेल रहे हो और तुम्हारे विरुद्ध कोई तेज़ गेंदबाज है तो अब्दुल मक्कर तुमसे पूछ सकता है कि क्या मैं तुम्हारे दुश्मन को मार दूं या उसे बकरा बना दूं? मुझे क्रिकेट

देखने का बड़ा शौक था। पिछले साल मैं एक मैच देख रहा था ऑस्ट्रेलिया और ग्लूसेस्टर के बीच। ग्लूसेस्टर की टीम के साथ मेरी थोड़ी-सी हमदर्दी हो गई और दूसरी टीम के खिलाड़ी धड़ाधड़ एक के बाद एक आउट होने लगे। मैं फौरन ही वहां से उठ कर चला नहीं जाता तो उस टीम की हार निश्चित थी। उसके बाद मैं कभी मैच देखने नहीं गया। आखिर सभी चाहते हैं न कि जो अच्छा खेले वही जीते।

फिर हमने न्यूज़ीलैंड की स्ट्रॉबेरी खाई जो बहुत बढ़िया थीं। तब तक मेज़ पर उगे पेड़ों में लगे फल पक चुके थे। चौथे पेड़ पर खुमानी की शक्ल के, पर उससे काफी बड़े छः सुनहरे फल लगे थे। मि. लीकी ने बताया ये आम हैं जो भारत में पैदा

होते हैं, इन्हें इंग्लैंड में नहीं उगाया जा सकता, सिवाय जादू से। मैंने कहा कि मैं आम खाऊंगा। मि. लीकी ने कहा कि अमीर-से-अमीर आदमी भी इसी बात में मेरी बराबरी नहीं कर सकते। वे हवाई जहाज़ से आम तो मंगा सकते हैं लेकिन किसी पार्टी में आम खिला नहीं सकते।

मैंने पूछा, 'ऐसा क्यों?'

लीकी ने कहा, 'लगता है कि तुमने आम कभी खाया नहीं है। आम खाने की सही जगह गुसलखाना है। ऊपर से तो आम पर मज़बूत छिलका होता है लेकिन अन्दर मुलायम गूदा। इसलिए जब तुम इसे खाओगे तो रस चारों तरफ से टपकेगा और तुम्हारे सफेद कपड़े खराब हो ज़ाएंगे। लेकिन तुम यह आम मज़े-से खा सकते हो। मगर ज़रा ठहरो मैं इस पर मंत्र फूंक दूं, फिर इसका रस तुम्हारे ऊपर नहीं टपकेगा।'

मि. लीकी ने अपनी छड़ी घुमाई और इसके बाद मैंने अपना आम खाया। आम बहुत बढ़िया था। ये ही एक ऐसा फल था जो सबसे बढ़िया स्ट्रॉबेरियों से भी अच्छा था। उसकी खुशबू का तो मैं बखान ही नहीं कर सकता। बीच में सख्त गुठली थी और उसके चारों ओर पीला गूदा। जादू का असर देखने के लिए मैंने थोड़ा-सा गूदा अपने कोट पर डाला लेकिन वो उछल कर मेरे मुंह में आ गया। मि. लीकी ने एक नाशपाती खाई और बाकी पांच आम मुझे घर ले जाने के लिए दे दिए। और उन्हें मुझे अपने गुसलखाने में ही खाना पड़ा क्योंकि इन पर मंत्र नहीं फूंका गया था।

थोड़ी देर तक हम कुत्तों, फुटबाल, जादू आदि के बारे में बातें करते रहे। फिर मैंने उनसे कहा कि अब मुझे घर जाना चाहिए।

मि. लीकी ने कहा, 'मैं तुम्हें घर पहुंचा दूंगा, मगर जब भी तुम्हें दिनभर की फुर्सत मिले मेरे साथ समय बिताने आना। अगर तुम यह देखना चाहो कि मैं आमतौर पर क्या करता हूं तो हम दोपहर में भारत या जावा जा सकते हैं। मुझे बता देना कि तुम्हें किस दिन समय मिलेगा। अब तुम इस कालीन पर खड़े हो जाओ और अपनी आंखे बन्द कर लो।

हम कालीन पर खड़े हो गए और मैंने आखिरी बार मेज़ की ओर देखा। लियोपोल्ड ने सारा नमक उठा दिया था और अब वो सुस्ता रहा था, फिलिस जुगाली कर रही थी, फिर मैंने अपनी आंखे बन्द कर ली। मि. लीकी ने कालीन को मेरा पता बताया और अपने कान थपथपाए। मैंने अपने चेहरे पर ठंडी हवा का झोंका महसूस किया मेरा दिल भी थोड़ा-थोड़ा घबरा रहा था। अब हवा फिर से गर्म हो गई थी और मि. लीकी ने मुझसे आंखें खोलने को

कहा। मैं अपने घर की बैठक में था – मिस्टर लीकी के मकान से पांच मील दूर।

मेरा कमरा छोटा था और फर्श पर किताबें आदि बिखरी हुई थीं। कालीन के लिए पूरी जगह नहीं थी इसलिए वो ज़मीन से करीब एक फीट ऊपर हवा में ही ठहर गया था। नीचे उतरकर मैंने बत्ती जलाई।

मि. लीकी ने मुझसे हाथ मिलाया और कहा, 'शुभ रात्रि।' इसके बाद उन्होंने अपना कान थपथपाया और कालीन के साथ ही वे भी गायब हो गए।

मैं अपने कमरे में अकेला था – आमों के साथ – जो मुझे बता रहे थे कि मैं सपना नहीं देख रहा था। मुझे उम्मीद है कि मेरे दोस्त मिस्टर लीकी तुम्हें एक बढ़िया आदमी लगे होंगे।

जे. बी. एस. हाल्डेन : (1892–1964) विख्यात अनुवांशिकी विज्ञानी। विकास (evolution) के आधुनिक सिद्धांत को स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान।

कम्युनिस्ट विचारधारा के समर्थक हाल्डेन ने अपने जीवन का अंतिम समय भारत में अहिंसा के बारे में लिखते हुए गुज़ारा।

पुष्पा अग्रवाल : जयपुर में रहती हैं।

ज़रा सिर तो खुजलाइए

एक गिलास को करीब आधा पानी से भरकर उसमें कॉर्क डालें तो वह तैरने लगता है। परन्तु बीच में न रहकर किनारे से सट जाता है। आपको बताना है कि बिना कॉर्क को छुए क्या करें कि कार्क किनारे से सटकर तैरने की बजाए बीच में तैरे।
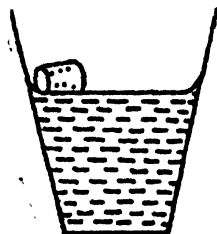
अपने जवाब इस पते पर भेजें – संदर्भ, द्वारा एकलव्य, कोठी बाज़ार, होशंगाबाद - 461 001.

अंक : 7

अंक : 8-9

अंक : 10

अंक : 11

अंक : 12

अंक : 7

अंक : 8-9

अंक : 10

अंक : 11

अंक : 12

अंक : 7

अंक : 8-9

अंक : 10

अंक : 11

अंक : 12

अंक : 7

अंक : 8-9

अंक : 10

अंक : 11

अंक : 12

इंडैक्स (INDEX)

कैसे देखें इसे : छह अंकों में प्रकाशित सामग्री का विषय आधारित वर्गीकरण किया गया है। कई लेखों में एक से ज़्यादा मुद्दे शामिल हैं। इसलिए कुछ लेख एक से ज़्यादा स्थानों पर आएंगे। लेख के शीर्षक और लेखक के नाम के साथ पहले बोल्ड में वह अंक है, जिसमें यह लेख छपा है, उसके बाद पेज नंबर दिया गया है। 8-9 संयुक्तांक था इसलिए इसे संयुक्त रूप से लिखा गया है।

भौतिकी (Physics)

गति (Botany)

प्राणीशास्त्र (Zoology)

माइक्रो बायलॉजी (Micro Biology)

मनोविज्ञान (Psychology)

रसायन (Chemistry)

गणित (Maths)

पारिस्थितिकी व पर्यावरण (Ecology & Environment)

इतिहास (History)

कुछ तरीके पढ़ाने के (Teaching Methods)

बच्चों के साथ अनुभव

पाठ्यक्रम की समीक्षा, सर्वे एवं रिपोर्ट

प्रयोग: गतिविधि एवं मॉडल